

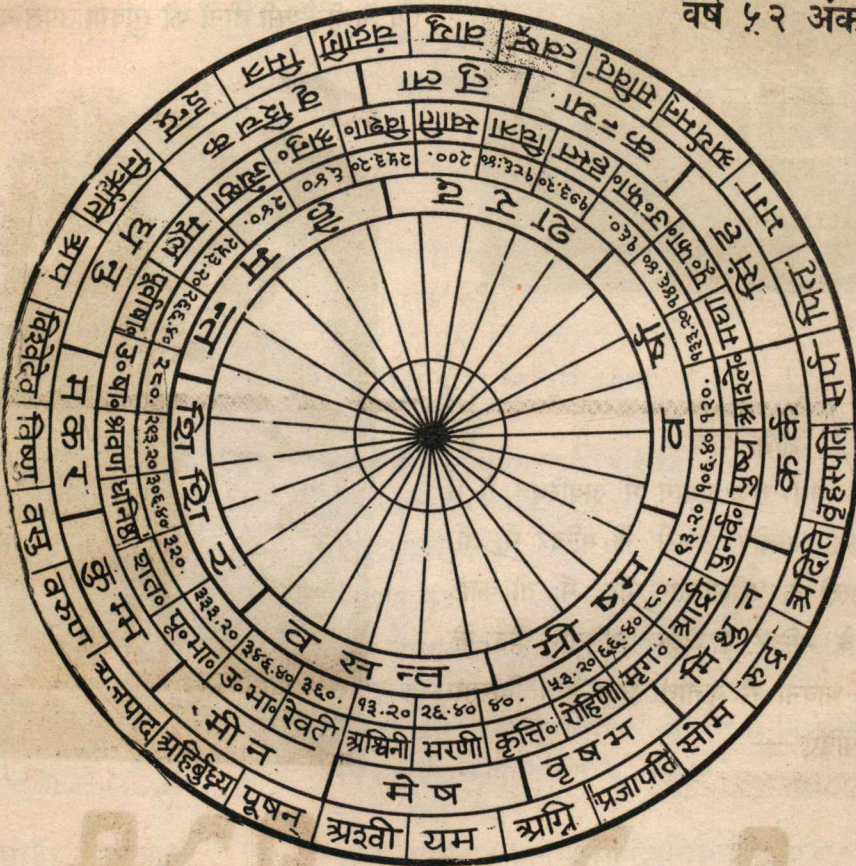


कौल-कल्पतरु

राण्डी

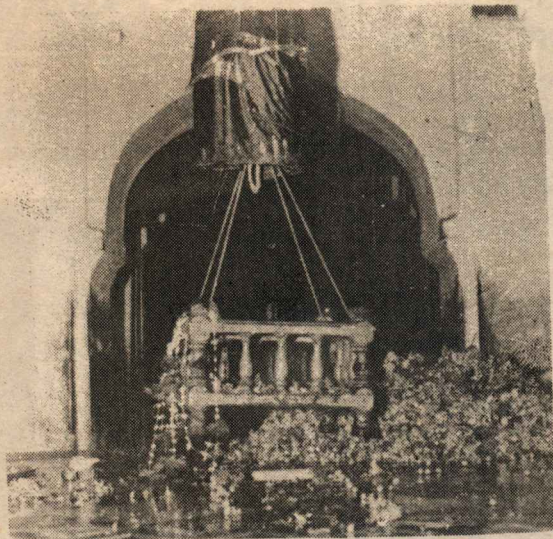


वर्ष ५२ अंक १०



दैवत-गोलस्थ राशि-नक्षत्र

इस अंक में- * तीर्थ- राज प्रयाग, * प्रयाग में दान का महत्व, * 'सूर्य-षष्ठी' व्रत, * योग-निद्रा, * कुमायूँ के इष्ट-देवता, * गायत्री-मन्त्र द्वारा प्राण-वायु का विशेष संचार, * सुन्दर-काण्ड का अनुभूत अनुष्ठान, * श्रीराम-चरित्-मानस के सकाम-निष्काम प्रयोग, * नक्षत्र-दोष-शान्ति के प्रयोग, * अघोरास्त्र, * सर्वारिष्ट विनाशक श्रीबाला-सहस्राक्षरी-स्तोत्रम्



‘भगवती ऐन्द्री’ इन्द्र की शक्ति है, जिसके हाथ में प्रमुख अस्त्र वज्र है। वे मुकुट धारण करनेवाली तथा सहस्र नयनों वाली हैं। वे गज पर आसीन तथा वृत्र नामक असुर के प्राणों का हरण करनेवाली हैं।

माँ ऐन्द्री देवी का यह स्वरूप प्रयाग - राज से १५ कि० मी० तथा त्रिवेणी-संगम से ६ कि० मी० की दूरी पर पूर्व की ओर जमुनीपुर (ककरा-कोटवा) गाँव में स्थित है। प्रयाग- राज से यहाँ पहुँचने के लिए रेल, बस एवं निजी टैक्सी तीनों की सुविधा उपलब्ध है।



इक्यावन शक्ति-पीठों में से ‘श्रीललिता-पीठ’- तीर्थ- राज प्रयाग में अवस्थित है। प्रयाग- राज में कोई ‘अलोप-शंकरी’ के मन्दिर में, तो कोई मीरापुर मुहल्ले के ‘श्रीललिता-पीठ’ में, तो कोई ‘कड़े की देवी’ के मन्दिर में दिव्य ‘ललिता’-पीठ के दर्शन करने की भावना से कृतार्थ होता है। विस्तृत विवरण के लिए पढ़िए —

श्रीअलोप-शङ्करी देवी

श्रीललिता-पीठ प्रयाग

मूल्य ४-०० रु० मात्र



मानद सम्पादक
रमादत्त शुक्ल

सम्पादक
ऋतशील शर्मा



पता
चण्डी कार्यालय,
अलोपोबाग मार्ग,
प्रयागराज-२११००६
(उ० प्र०)

दूर-भाष
६०६७८३



शुल्क भारत में
एक प्रति : रु० ६

वार्षिक शुल्क : रु० ६५
आजीवन शुल्क : रु० ६५०



शुल्क विदेश में
हवाई डाक/समुद्री डाक

वार्षिक : रु० ६००/४००
आजीवन : ६०००/४०००

शुल्क मनीआर्डर या ड्राफ्ट
कौल-कल्पतरु चण्डी के नाम
से चण्डी कार्यालय, इलाहाबाद
के पते पर भेजें।

मुद्रक
परा वाणी प्रेस
अलोपोबाग मार्ग,
प्रयागराज-२११००६

वर्ष ५२]

पौष, 'व्यय' सम्बत् २०५० वि०

[अङ्क १०

जनवरी, १९६४

राष्ट्रीय-मन्त्र

(गण-तन्त्र दिवस के पुनीत अवसर पर 'प्रेरणा'-दायक बीज-मन्त्र)

मा सत्यमेव जयते,
मा भक्ति - शक्ति - युक्तिमेव जयते,
मा धर्म - धैर्य - धारणमेव जयते,
मा ज्ञान - उपासना - कर्मैव जयते,
मा इच्छा - क्रिया - ज्ञानमेव जयते,
मा प्रेम - शील - सत्यमेव जयते ॥

इस अंक में

- ० विश्व-व्यापी शिक्षा-प्रसार का आह्वान ? २६०
- ० 'प्रयाग-राज'—सर्वोत्तम तीर्थ-स्थल २६१
- ० बिहार में 'सूर्य' या 'सूर्य-षष्ठी' व्रत २६३
- ० योग-निद्रा द्वारा शिथिलीकरण २६५
- ० न्यास एवं कवच २६७
- ० कुमार्यु के इष्ट-देवता : गोलू देवता २६६
- ० सिद्धि-मार्ग के पथिक ३०१
- ० आनन्द-मयी भैरवी ३०५
- ० साधन-माला ३०७-३१६

१४० गायत्री-मन्त्र द्वारा प्राण-वायु का विशेष सञ्चार

१४१ सुन्दर-काण्ड का अनुभूत अनुष्ठान

१४२ 'श्रीराम-चरित-मानस' के सकाम-निष्काम प्रयोग

१४३ नक्षत्र-दोष-शान्ति के प्रयोग

१४४ अघोरास्त्र

१४५ सर्वारिष्ट-विनाशक श्रीबाला-सहस्राक्षरी-स्तोत्रम्

० जैसा जाना-समझा ३१७

० जिज्ञासु के पत्र ३१८



माघ-मेला, प्रयाग के पर्व

१४ जनवरी ६४ मकर संक्रान्ति १५ फरवरी वसन्त-पञ्चमी
१० फरवरी मौनी अमावास्या २६ फरवरी माघी पूर्णिमा

सम्पादकीय

विश्व-व्यापी शिक्षा-प्रसार का आह्वान ?

नई दिल्ली, १६ दिसम्बर, ६३ । 'सबके लिए शिक्षा' विषय पर नौ राष्ट्रों के शिखर - सम्मेलन में भारत ने अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव, सहिष्णुता और शान्ति के लिए शिक्षा-प्रसार के विश्व - व्यापी प्रयास का आह्वान किया । शिखर-सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए राष्ट्र - पति शङ्करदयाल शर्मा ने कहा कि 'सबके लिए शिक्षा'-अभियान का उद्देश्य एक ऐसी उत्कृष्ट सभ्यता का विकास करना है जो पारम्परिक संस्कृतियों के सर्व - श्रेष्ठ मूल्यों को अक्षुण्ण रखती हो, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के लाभदायक पक्ष का उपयोग करती हो और मानव तथा राष्ट्रों में मानवता, शान्ति और मित्रता की भावना को बढ़ावा देती हो ।

प्रधान-मन्त्री पी० वी० नरसिंह राव ने कहा कि 'शिक्षा'-प्रसार पर ही बेहतर स्वास्थ्य, जन-संख्या-नियन्त्रण और लोक-तान्त्रिक व्यवस्था निर्भर करती है । 'शिक्षा' - जनित विकास से ही आर्थिक-सामाजिक तनाव कम होंगे ।

प्रश्न उठता है कि कौन - सी शिक्षा ? सबके लिए कैसा शिक्षा-अभियान ? क्या वही, जिससे १६ दिसम्बर, ६३ को ही समाचार-पत्रों के शीर्षस्थ समाचारों के रूप में पढ़ने को मिला—उत्तर प्रदेश विधान-सभा में अभूत-पूर्व सङ्घर्ष ! लोक-तन्त्र लहू-बुहान ! आदि-आदि । यदि हाँ, तो महा-महिम राष्ट्र-पति और प्रधान-मन्त्री के वक्तव्यों की सच्चाई को 'काल-चक्र' ने तत्क्षण ही स्पष्ट कर दिया है ।

आधुनिक शिक्षा के परिणाम क्या हैं ? अब यह विचार - शील व्यक्तियों को बताने की आवश्यकता नहीं है । सब कुछ सभी के सामने नित्य घटित हो रहा है । आधुनिक शिक्षा से हमारे देश-वासियों का शरीर, मन एवं बुद्धि का जैसा निर्माण हुआ है, वह न तो अपने जीवन को स-फल बनाने में समर्थ है, न ही दूसरों के बारे में स-फल है । आधुनिक शिक्षा के प्रभाव से आज प्रायः देश - वासी अपना ईश-प्रदत्त स्वाभाविक स्वास्थ्य, शान्ति, सन्तोष और सदसद् विचार-शक्ति खो चुके हैं । समस्याएँ दिन-प्रतिदिन जटिल बन रही हैं । 'शिक्षा' का मुख्य उद्देश्य व्यवहार में सार्थक परिवर्तन है । इसके विपरीत आधुनिक शिक्षा के कारण समाज के व्यवहार में आत्म - घातक परिवर्तन आज स्पष्ट दिख रहा है ।

अतः आवश्यकता है, अपनी 'प्राचीन शिक्षा-व्यवस्था' के प्रति ध्यान देने की । अपने प्राचीन नियमों को ढूँढ़ कर नव - ज्योति से सु-पुष्ट बनाने की । इसीलिए 'चण्डी' के गताङ्क के पहले पृष्ठ में हमने पाठकों का ध्यान 'गुप्तावतार बाबाजी' की परा-वाणी के रूप में आकर्षित किया है । गण-तन्त्र दिवस के पुनीत अवसर पर राष्ट्रीय-मन्त्र के आलोक में राष्ट्र - पति और प्रधान - मन्त्री के वक्तव्यों की पृष्ठ-भूमि को देखते हुए पाठकों का ध्यान पुनः आकर्षित करना अपना कर्तव्य समझता हूँ ।



माघ-मेला 'व्यय' सम्बत् २०५० वि० के पुनीत अवसर पर :

‘प्रयाग-राज’—सर्वोत्तम तीर्थ-स्थल

❖ पं० शिवकुमार दुबे, ३५/३ जवाहरलाल नेहरू मार्ग, प्रयाग-राज-२११००२

को कहि सकइ प्रयाग प्रभाऊ । कलुष पुञ्ज कुञ्जर मृगराऊ ॥

‘प्रयाग - राज’ विश्व का प्राचीनतम और सर्वोत्तम तीर्थ - स्थल है । श्वेत - श्याम नदियों का सङ्गम ‘प्रयाग’ सदियों से देवताओं, ऋषियों, मुनियों, साधु-सन्तों और गृहस्थों की तप-स्थली रहा है । गङ्गा-यमुना और अदृश्य सरस्वती के सङ्गम-स्थल पर प्रति वर्ष ‘माघ-मेले’ का आयोजन होता है । यह मेला सूर्य के मकर राशि में प्रविष्ट होने पर लगता है । भारत के विभिन्न भागों से ‘तीर्थ’-यात्री ‘कल्प-वास’ और स्नान हेतु यहाँ एकत्रित होते हैं ।

‘प्रयाग’ ही विश्व में एक ऐसा ‘तीर्थ’-स्थल है, जो ‘कामद’ भी है और ‘मोक्षद’ भी । विश्व के सारे तीर्थ इसके अधीन हैं । इसलिए ‘प्रयाग’ ‘तीर्थ-राज’ है । स्वर्ग, मर्त्य और पाताल लोकों में कुल साढ़े तीस करोड़ तीर्थ हैं । इन सभी तीर्थों का राजा ‘प्रयाग’ है, जो मुक्ति और भुक्ति दोनों देता है । ‘प्रयाग’-तीर्थ की सेवा देवता, मुनि और दैत्य भी करते हैं । प्रत्येक ‘माघ’ - मास में जब सूर्य मकरस्थ होते हैं, ‘प्रयाग’ में विश्व के समस्त तीर्थ और देव, आदर-पूर्वक त्रिवेणी में स्नान करते हैं ।

अन्य स्थानों पर ‘पाप’-कर्मों का नाश, पुण्य क्षेत्रों का दशन करने से होता है । पुण्य क्षेत्र में हुए पापों का शमन, ‘कुम्भकोण’-तीर्थ में होता है । ‘कुम्भकोण’-तीर्थ में हुए पापों का नाश ‘वाराणसी’-तीर्थ में होता है । ‘वाराणसी’-तीर्थ में हुए पापों का शमन, ‘प्रयाग’-तीर्थ में होता है । ‘प्रयाग’ - तीर्थ में हुए पापों का शमन ‘यमुना’ में, ‘यमुना’ में हुए पापों का शमन ‘सरस्वती’ में, ‘सरस्वती’ में हुए पापों का नाश ‘गङ्गा’ में और ‘गङ्गा’ में हुए पापों का शमन त्रिवेणी - स्नान से होता है । ‘त्रिवेणी’ में हुए पापों का नाश, ‘प्रयाग’ में मृत्यु होने से होता है ।

‘प्रयाग’ के कण्ठ-भाग में ‘तीर्थ’-समूह का निवास है । ‘दान’-समूह इसके चरण पर लोटते हैं और ‘व्रत’-समूह इसके बाहु-बल में हैं । ऐसा ‘प्रयाग’-तीर्थ सभी तीर्थों का राजा है, श्रेष्ठ है । ‘प्रयाग’ के त्रिवेणी-सङ्गम के सम-तल स्थल पर, एक बार ब्रह्मा जी ने समस्त देवताओं और ऋषि - मुनियों के समक्ष तुला पर तीर्थों की गुरुता का माप किया था । सर्व-प्रथम सप्त - पुरियों को परस्पर तौला गया, तो सभी एक-दूसरे के बराबर निकलीं । १ अयोध्या, २ मथुरा, ३ हरिद्वार, ४ काशी, ५ काञ्ची, ६ जगन्नाथपुरी और ७ उज्जैन—ये सातों पुरियाँ ‘मोक्ष’-दायी होने के कारण तुला पर परस्पर बराबर तौल की हुईं । तदनन्तर ब्रह्मा जी ने सातों धुरियों को तुला के एक पलड़े पर रखा और सातों ‘कुल’-पर्वतों को दूसरी ओर रखा किन्तु ‘सप्त’-पुरियों का पलड़ा भारी रहा । फिर सातों समुद्रों, सातों द्वीपों और नव-खण्डों को बारी-बारी से पलड़े पर रखा गया किन्तु ‘सप्त’-पुरियों का पलड़ा भारी रहा । इन सभी को एक साथ करके तीनों भुवनों के तीर्थों, नदियों और नदों को एक पलड़े पर रख कर तौला गया किन्तु ‘सप्त’-पुरियों का पलड़ा भारी रहा । इस चमत्कार से ब्रह्मा, देव - गण और ऋषि - गण किङ्कर्तव्य-विपूढ़ हो गए । तब ब्रह्मा जी ने शेष-नाग से इस विस्मयकारी घटना का कारण पूछा ।

शेष-नाग ने कहा कि इन ‘सप्त’-पुरियों को और अन्य सभी कुल-पर्वतों, द्वीपों, समुद्रों, तीर्थों को एक पलड़े पर रख कर दूसरे पलड़े पर ‘प्रयाग’-तीर्थ को रखिए । ब्रह्मा के ऐसा करने पर तुला के

दोनों पलड़े बराबर तौल के हुए । 'प्रयाग'-विराट् पुरुष का मस्तक है । देव - गण, इस विराट् पुरुष के अवयव हैं, सातों पुरियाँ सप्त-धातु हैं, नदियाँ नाड़ी हैं, मेघ शिर के बाल हैं और पर्वत - गण हड्डी हैं । जिस प्रकार ब्रह्माण्ड से जगत् उत्पन्न होता है, उसी प्रकार 'प्रयाग' से सभी तीर्थ उत्पन्न होते हैं, अन्य तीर्थों से प्रयाग उत्पन्न नहीं होता । इसीलिए 'प्रयाग' - 'तीर्थ' - राज है । यही यहाँ के 'धर्म'-सङ्गम का महत्त्व है ।

'प्रयाग' विराट् पुरुष का मस्तक है । यहाँ त्रिवेणी है । नासिका के दोनों छिद्रों से इड़ा, पिङ्गला और सुषुम्णा नाड़ियाँ चलती हैं । 'इड़ा' का स्वभाव शीतल है । यही गङ्गा नदी है । 'पिङ्गला' का स्वभाव उष्ण है । यही यमुना नदी है । गङ्गा - यमुना के मध्य में 'सङ्गम' है, उसका स्वभाव शीतोष्ण है । यही 'सुषुम्णा' नाड़ी है । 'प्रयाग' में गङ्गा बाएँ भाग से आती है, यमुना दाहिने भाग से और दोनों का सङ्गम पूर्व और दक्षिण कोण में, जिसे 'अग्नि' - कोण कहते हैं, होता है । 'योग' की दृष्टि से इस सङ्गम का मूल है—इड़ा-पिङ्गला नाड़ियों के मूल का प्रत्यक्षीकरण अर्थात् 'मुक्ति'-प्राप्ति ।

इस प्रकार 'प्रयाग' का सङ्गम इड़ा, पिङ्गला और सुषुम्णा का सङ्गम है । सिद्ध, साधक, तपस्वी, गृहस्थ—सभी इसमें गोता लगाकर शारीरिक स्फूर्ति का अनुभव करते हैं । यही कारण है कि 'प्रयाग' का सङ्गम-तट अनादि-काल से ऋषि - मुनियों, सिद्ध - साधकों, गृहस्थों, धर्माचार्यों को अपनी ओर आकृष्ट करता रहता है—प्रति वर्ष 'माघ'-मेले के अवसर पर । प्रति छठवें वर्ष 'अद्ध - कुम्भ' के अवसर पर और प्रति बारहवें वर्ष 'कुम्भ' के अवसर पर ।

'प्रयाग'-क्षेत्र का विस्तार पाँच कोस में है । इसके 'षट्'-कोण हैं । 'प्रयाग'-वास, सब यज्ञों से श्रेष्ठ कहा गया है । 'प्रयाग' को 'षट् - कूल - क्षेत्र' कहते हैं । गङ्गा के दो किनारे, यमुना के दो किनारे और सङ्गम के दो किनारे—सब मिला कर 'प्रयाग' में छः तट होते हैं । इसीलिए इसे 'षट्-कूल-क्षेत्र' कहते हैं ।

'प्रयाग'-वेदी स्वरूप है, जो तीन प्रकार की है—१ अन्तर्वेदी, २ मध्य-वेदी और ३ बहिवेदी । इन तीन वेदियों के बीच निवास करनेवालों के लिए 'प्रयाग' - क्षेत्र कल्प-लता के समान फल-दायी है ज्ञानी-अज्ञानी को यहाँ समान फल मिलता है । यहाँ ज्ञान और भक्ति की अविरल धारा बहती है और 'ब्रह्म'-ज्ञान का प्रकाश होता रहता है । यहाँ एक रात्रि भी निवास करनेवाले को 'भक्ति' - रूपी फल मिलता है । इसकी महत्ता को सर्व-प्रथम ब्रह्मा ने समझा और यहाँ दस अश्व-मेध यज्ञ किए । उन्हीं कः स्मृति में 'प्रयाग' में अनन्त फल देनेवाला 'दशाश्वमेध'-घाट है । गङ्गा के 'दशाश्वमेध' - घाट पर स्नान करनेवाले वर्ष-पर्यन्त स्नान करते हैं ।

'प्रयाग' की भौगोलिक स्थिति कुछ इस प्रकार की है कि प्रत्येक माघ में सूर्य मकरस्थ होने पर पृथ्वी के पास आ जाते हैं । चन्द्रमा भी पृथ्वी के पास होता है । ये दोनों ग्रह पृथ्वी के पास होने के कारण जल पर अपने अनुकूल प्रभाव को बहुत ही प्रभावी ढङ्ग से डालते हैं । इसीलिए प्रत्येक माघ के महीने में त्रिवेणी 'सङ्गम'-तट पर धार्मिक मेला लगता है । पौष पूर्णिमा तक धार्मिक वृत्तिवाले 'कल्प-वास' करते हैं । कुछ लोग, मकर संक्रान्ति से शिव-रात्रि तक 'कल्प'-वास करते हैं ।

'प्रयाग' में यज्ञादि कर्मों, दान-व्रत-उपवास से पूर्व-जन्म और इस जन्म में अर्जित होनेवाले पाप कर्मों से मुक्ति मिलती है और इस प्रकार 'प्रयाग' में मुक्ति और भुक्ति दोनों प्राप्त होती हैं ।



बिहार में 'सूर्य' या 'सूर्य-षष्ठी' व्रत

❏ 'कुल-वाणी-रत्न' श्री वीरेन्द्र गिरि, अध्यक्ष 'बिहार शाक्त सम्मेलन'

'बिहार' की गरिमा - मय भूमि भारतीय सांस्कृतिक कोष की अद्वितीय पृष्ठ - भूमि रही है। लोक-विहित परम्पराओं, लोक-श्रुतियों तथा पौराणिक आख्यायिकाओं पर आधारित रङ्ग-बिरङ्गे पर्व-त्योहार 'बिहार' की सांस्कृतिक चेतना को काल-क्रम से परिमार्जित और परिवर्तित करते रहे हैं। जिस प्रकार 'राजस्थान' का रंगीला 'गण-गौर', 'बङ्गाल' का 'श्रीदुर्गा महोत्सव', 'पञ्जाब' की 'वैशाखी' और 'केरल' में 'ओणम' तथा 'तमिलनाडु' में 'पोङ्गल' का त्योहार अति उत्साह और नवीन कल्पनाओं से दीप्त रहता है; उसी प्रकार 'बिहार प्रदेश' का पावन 'सूर्य - षष्ठी - व्रत'—यहाँ की मर्यादा को पुनः स्थापित करने में सर्वथा सक्षम है। राष्ट्रीय स्तर के पर्व 'होलिकोत्सव' के पश्चात् बिहार का 'सूर्य षष्ठी-व्रत' भी जन-भावनाओं के बीच पारस्परिक सौहार्द के साथ एकात्मकता और एक - निष्ठ 'सूर्योपासना' की पद्धति पर बल प्रदान करता है।

'होलिकोत्सव' की भाँति ही 'सूर्य - षष्ठी - व्रत' के साथ पौराणिक जन - श्रुति जुड़ी हुई है। किम्बदन्ती है कि भगवान् 'श्रीकृष्ण' के पीत्र 'साम्ब' को कुष्ठ रोग ने ग्रस लिया था। उसी से त्राण पाने हेतु 'छठ-व्रत' या सूर्य-उपासना की पद्धति का प्रचलन हुआ। तभी से आज तक 'बिहार' का जन-मानस इस पावन व्रत के प्रति अत्यन्त शुचिता और श्रद्धा के साथ 'त्रि-दिवसीय सूर्य-षष्ठी व्रत' की उपासना में प्रत्येक वर्ण के लोगों के साथ कार्तिक शुक्ला पञ्चमी से कार्तिक शुक्ला सप्तमी के प्रातः तक या चैत्र शुक्ला पञ्चमी से चैत्र शुक्ला सप्तमी की प्रभात-वेला तक इस व्रत का अनुष्ठान करता आ रहा है।

एक किम्बदन्ती के अनुसार भगवती षष्ठी को भगवान् कार्तिकेय की शक्ति के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। अजेय कार्तिकेय की अजेय शक्ति है—'षष्ठी देवी', जो बालकों के स्वास्थ्य और जीवन-रक्षार्थ इन तीन दिनों में अवतरित होती हैं। व्रती परिवार की सभी कामनाओं को पूर्ण करती हुई भगवती षष्ठी सुख-समृद्धि और सन्तान-सुख की अधिष्ठात्री देवी के रूप में सम्पूजित हैं। इस सम्बन्ध में 'देवी-भागवत' की कथा भी प्रख्यात है। 'श्रीदुर्गा - सप्तशती' में 'षष्ठी देवी' को 'भगवती कात्यायनी' के रूप में अभिहित किया गया है। 'भगवती कात्यायनी' की उपासना बालिकाओं के उज्ज्वल भविष्य के लिए सौभाग्य-प्रद होती है। उसी प्रकार 'सूर्य-षष्ठी व्रत' भी सौभाग्य का सूचक है। अतः बिहार प्रदेश तथा इससे जुड़े इतर प्रदेशों के निकट-वर्ती जिलों में भी इस व्रत का प्रचलन हो गया है।

'सूर्य-षष्ठी-व्रत' के पीछे चाहे जो भी धार्मिक किम्बदन्ती रही हो अथवा सामाजिक रीति ही क्यों न रही हो, सबमें आध्यात्मिक और जन-जीवन की वैज्ञानिक अवधारणाओं का पुट है। महर्षियों ने 'जीवेत् शरदं शतम्' की मनोकामना 'सूर्य-षष्ठी-व्रत' के आधार पर ही की है। वर्षान्त के उपरान्त सर्दी आने में झिझकती है। इस ऋतु का समादर करने के लिए ही 'सूर्य - षष्ठी - व्रत' में जल में आकण्ठ खड़े रहकर 'अर्घ्य' प्रदान किया जाता है, जिससे शरीर पर अचानक शीत - प्रकोप न हो। जिस प्रकार 'नवरात्र-व्रत' 'पावस-ऋतु' से उत्पन्न आन्तरिक विकृतियों को सहन करने की शक्ति प्रदान करने हेतु

अन्तःशोधित-विधान है, जिससे नवीन ऋतु की आयातित ऊर्जा का भविष्य के लिए सञ्चय होता है, उसी प्रकार शारदीय ऋतु के शीत-प्रकोप का अनुभव करते हुए शरीर को सहिष्णु रखने की वैज्ञानिक शिक्षा इस 'सूर्य पर्व' से प्राप्त हो जाती है। तीन दिनों के सतत अभ्यास से व्रती आनेवाले कुछ महीने के लिए स्वयं को वातानुकूलित परिस्थितियों के अनुकूलन में स्वयं-सिद्ध हो जाता है। चैत्र शुक्ला षष्ठी भी शरद के त्याग और आतप के स्वीकार का सन्धि-पर्व है।

यदि उक्त विवेचन पर आध्यात्मिक दृष्टि डाली जाय, तो एक महान् जीवन-दर्शन की अनुभूति स्वयं होने लगती है। 'दीपावली' का 'प्रकाश-पर्व' सूची-भेद्य निशीथ में प्रारम्भ होकर भगवान् सप्ताश्व-रथी आदित्य को अर्घ्य प्रदान करके ही छठे दिन की परि-समाप्ति पर पूर्ण होता है। 'वेद' के महा-वाक्य—'तमसो मा ज्योतिर्गमय' की प्रत्यौगिक पृष्ठ-भूमि है—यह 'सूर्य-षष्ठी-व्रत'।

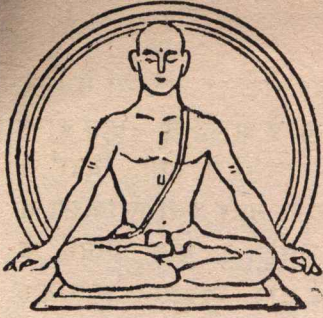
उपनिषदों की मान्यता है कि 'सूर्यस्य आत्मा जगत्तश्चक्षुः।' अन्यत्र भी इसे 'हिरण्य - गर्भ' अर्थात् सम्पूर्ण चर-अचर जीव-धारियों का प्रत्यक्ष जैविक स्रोत माना गया है। यह बात विज्ञान-सम्मत भी है। प्राणि-मात्र से लेकर उद्भिजों के जीवन और विकास तक की यात्रा का मूल-भूत कारण परम ज्योतिर्वलय यह 'सूर्य' ही है। दिवाकर की रश्मियाँ जो असंख्य होकर ब्रह्माण्ड में छितराई हुई हैं, वे जड़-चेतन सभी में 'आत्म-शक्ति' के रूप में सूत्र-वत् अवस्थित हैं।

जब तक 'सूर्य' है, तभी तक इस पृथ्वी पर जीवन गतिमान है अर्थात् प्राण - रस से परिपूर्ण समुज्ज्वल रश्मि-रज्जु प्रत्येक जीव में अन्तःस्थ प्राण-स्वरूपा ज्योतिर्वलय से अहर्निश सम्पर्क बनाए हुए है। इस रस-सिञ्चन से ही सूक्ष्म रूप में जीवन परिपुष्ट हो रहा है। अतः शरद ऋतु के प्रारम्भ में 'सूर्य' को 'अर्घ्य' प्रदान करते हुए स्वस्थ जीवन और रस-समृद्धि हेतु जो मङ्गल-कामना की जाती है, उससे तपोनिष्ठ व्यक्ति के शरीर में भगवान् भास्कर अपरिमित प्राण-ऊर्जा प्रक्षेपित करते हैं। जीवन की क्षीण पड़ती हुई प्राण - ज्योति भी नवीन रस - सञ्चार से दीप्त हो उठती है, जिससे भगवान् आदित्य के प्रति श्रद्धा और विश्वास अटूट होने लगता है।

एक बार पं० जवाहरलाल नेहरू ने श्रीमती इन्दिरा गांधी से कहा था—'सूरज को मित्र बनाओ। बाकी चीजें स्वतः प्राप्त हो जाएँगी।' इसका यही आशय है कि जब तक पृथ्वी पर 'सूर्य' की रश्मियाँ पड़ रही हैं, इस पृथ्वी पर प्राण का सञ्चार हो रहा है। जो व्यक्ति प्रति-दिन ब्रह्माण्ड की इस अलकनन्दा से परितृप्त होता रहेगा, वह अमरत्व की स्थिति को प्राप्त हो जाएगा।

इस प्रकार पौराणिक महत्त्व की स्थली भारत को नवीन विचार-धाराओं का उपदेश करने-वाली गङ्गा-तटीय 'बिहार प्रदेश' की शाद्वल भूमि का यह 'छठ पर्व' इस त्योहार के द्वारा असीम प्राण-ज्योति प्राप्त करने का सङ्केत प्रदान करता है। वर्ष में दो बार मनाया जानेवाला यह 'सूर्य-षष्ठी-व्रत' भारतीय सांस्कृतिक परम्परा की गौरव-शाली आध्यात्मिक धरोहर है।





योग-निद्रा द्वारा शिथिलीकरण

❧ डा. आर. पी. पाण्डेय, बिलासपुर (म.प्र.)

‘योग’ की विभिन्न प्रणालियों में अनेक क्रियाएँ एवं प्रक्रियाएँ हैं, जिनमें से एक विशिष्ट क्रिया को ‘योग-निद्रा’ कहते हैं। इस क्रिया में योगी जागते हुए सोता है। लगभग आठ घण्टे की स्वप्न - हीन साधारण निद्रा से मनुष्य जिस आनन्द-दायक स्थिति का अनुभव करता है, योगी केवल आध घण्टे की ‘योग-निद्रा’ से उसे प्राप्त कर लेता है। यह शिथिलीकरण की विशेष क्रिया है तथा रुग्णावस्था में इसका प्रयोग करने से रुग्ण व्यक्तियों में आश्चर्य-जनक लाभ देखा गया है। ‘ज्ञान - योग’ में, इस क्रिया की अन्तिम उपलब्धि अत्यन्त गहरा शिथिलीकरण है, जिसमें शरीर की मांस-पेशियों का मांसल तनाव न्यूनतम तनाव की अवस्था को प्राप्त हो जाता है। ‘राज-योग’ में, ‘योग-निद्रा’ से गहरे ध्यान की स्थिति भी प्राप्त की जा सकती है। ‘योग-निद्रा’, एकाग्रता की ऐसी विधि है, जो गहरी अन्तरङ्ग अवस्था प्राप्त कराती है। प्राचीन-काल में यह विधि गुरु-शिष्य-परम्परा तक ही सीमित थी।

‘योग-निद्रा’ में दो अवस्थाएँ होती हैं। प्रथमावस्था में मस्तिष्क की पूर्ण गुणशाली सजगता से मुक्ति मिलती है। यह अवस्था यकृत-तन्त्रिका-प्रणाली के दल-दल से हटाती है तथा आर० ई० एम० एस० की चौथी अवस्था की तन्त्रिका-प्रणाली की पूर्वावस्था को प्राप्त कराती है, जो निद्रा की पाँचवीं अवस्था हेतु अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। ‘तुरीय’ की दूसरी अवस्था को तुरीयातीत कहते हैं, जो ‘निद्रा’ की चौथी अवस्था के पश्चात् चौथी अवस्था के विस्तार के रूप में आती है। इसे ही ‘योग’ में ‘योग - निद्रा’ की दूसरी अवस्था कहते हैं।

‘योग-निद्रा’ सचेत ‘निद्रा-योग’ की अवस्था का गहरा शिथिलीकरण है, जहाँ शरीर निद्रा के सभी लाभों को प्राप्त करके आराम से विश्राम करता है, परन्तु यह एक यौगिक शिथिलीकरण है। यह ‘योग’ के सभी अभ्यासों से, शिथिलीकरण की गहन-तम अवस्था है। इसमें मस्तिष्क चौकन्ना एवं सचेत रहता है, परन्तु वातावरण के प्रति अधिक चिन्तित नहीं रहता। सजगता की इस चौथी अवस्था में सजगता की चेतना विद्यमान रहती है।

‘योग-निद्रा’ की दो विधियाँ हैं। पहली विधि में, शवासन में सोया जाता है तथा दूसरी विधि में, ध्यान की अवस्था में सीधे बैठने की ५ विधियों—१ सुखासन, २ सिद्धासन, ३ पद्मासन, ४ अर्ध-पद्मासन या ५ वज्रासन में से किसी भी ‘आसन’ में बैठा जा सकता है और ‘योग - निद्रा’ की जा सकती है। बैठने की प्रत्येक क्रिया में मेरु-दण्ड सीधा रहना चाहिए। हथेली ऊपर की ओर तथा दाहिना हाथ, बाएँ हाथ के ऊपर रहना चाहिए, जिससे जो ‘प्राण’-शक्ति हथेली से विसर्जित हो, वह द्वितीय या तृतीय-चक्र में समाहित हो जाए।

बैठने की स्थिति में सिर, उत्तर दिशा की ओर रहना चाहिए तथा सोई हुई अवस्था में सिर उत्तर तथा पैर दक्षिण दिशा की ओर रहने चाहिए। स्थान सूखा तथा वायु के झोंकों से रहित होना चाहिए। कम्वल के ऊपर बैठना या लेटना चाहिए। यदि मच्छर या अन्य कीटाणुओं से 'योग - निद्रा' में व्यवधान पहुँचने की सम्भावना हो, तो मच्छरदानी लगा लेनी चाहिए, जिससे गहरे शिथिलीकरण में बाधा उत्पन्न न होने पाए। बाहर से होनेवाले सभी व्यवधानों को हटा देना चाहिए। 'योग - निद्रा' के गहरे शिथिलीकरण में टेलीफोन की घण्टी, दरवाजे की घण्टी तथा अन्य ऊँचे शोर, व्यवधान मानसिक रूप से खतरनाक होते हैं।

विधि - पूर्वक लेटने अथवा बैठने के बाद सावित्री प्राणायाम करना चाहिए। इसका अनुपात ८ : ४ : ८ रहना चाहिए। यथा—आठ के गिनने तक श्वास लें, आठ के गिनने तक श्वास छोड़ें। भीतर तथा बाहर ४ के गिनने तक श्वास रोके। अर्ध-शिथिलीकरण होने तक इसका अभ्यास करे। फिर चेतना को नाभि के पास 'मणिपुर-चक्र' में ले जाए तथा श्वास से ध्यान हटाकर उसे स्वाभाविक रूप से चलने दे और विशेष 'प्राणिक'-प्रवाह पर ध्यान दे।

'मणिपुर-चक्र' में पिन की नोक के बराबर बिन्दु से घड़ी के काँटे की तरह कल्पना करे कि 'प्राणिक'-प्रवाह हो रहा है। आरम्भ में, गोलाकार छोटे-से-छोटे वृत्त के आकार की कल्पना करे। फिर कुछ मिनट के बाद कल्पना करे कि 'प्राणिक'-प्रवाह वर्तुलाकार बाहर की ओर अपना आकार बढ़ा रहा है। अन्त में उसे सिर और पैर के बाहर तक बढ़ता हुआ कल्पना करना चाहिए। यहाँ यह ध्यान रखना चाहिए कि 'प्राणिक'-प्रवाह घड़ी के काँटे की दिशा की तरह वर्तुलाकार बाएँ से दाहिनी ओर क्रमशः होना चाहिए। पहले 'मणिपुर - चक्र' (नाभि - स्थान) से पिन की नोक के बराबर कल्पना करे। फिर क्रमशः अँगूठे की गोलाई के बराबर, चाय के कप की गोलाई के बराबर, छोटी तश्तरी की गोलाई के बराबर, भोजन की थाली की गोलाई के बराबर कल्पना करे। आगे कल्पना से इस वर्तुलाकार को ग्रीवा के नीचे तथा जङ्घा के मध्य तक बढ़ाए। फिर ऊपर चिबुक तक नीचे पिण्डुली तक बढ़ाए। उसके बाद ऊपर भौं तथा नीचे टखने तक ले जाए। इसी क्रम में सिर के ऊपर तथा तलवे के नीचे तक बढ़ाए। सिर के ऊपर ६ इंच तथा पैर के नीचे ६ इंच तक बढ़ाए, इससे अधिक न बढ़ाकर यहीं रुक जाए और इस 'कल्पना'-बिन्दु को ३० सेकेण्ड से ३ मिनट तक स्थिर रखकर चेतना में शिथिलीकरण का अनुभव करे। साथ ही, यहाँ जागते रहने तथा सजग रहने का दृढ़ सङ्कल्प कर गहरे शिथिलीकरण का आनन्द ले।

फिर क्रमशः उक्त वर्तुल वृत्तों को उलट दे अर्थात् अब दाहिने से बाएँ की ओर घुमाकर सम्पूर्ण वृत्तों से होकर 'मणिपुर-चक्र' के बिन्दु में वापस आए। 'मणिपुर - चक्र' पहुँच कर पुनः विरुद्ध कल्पना करे कि घड़ी के काँटे की विरुद्ध दिशा के वृत्त कल्पनातीत हलके हो गए हैं। इसी बिन्दु पर उच्च - तम गहराई की 'योग-निद्रा' प्राप्त होती है। लगभग १२ मिनट बाद पुनः शरीर में इन्द्रिय - जनित ज्ञान एवं चेतना आ जाती है। तब अपने पैरों को सीधा करे और एक ही दिशा में बार - बार घुमाए। ग्रीवा और सिर को भी हिलाए। अन्त में शरीर को हिलाकर, बैठकर, सठ जाए। बाँयाँ हाथ उठाकर हृदय के बाईं ओर घूम जाए। हाथ और घुटने के बल होकर उठे। चाहे तो एड़ी के बल कुछ समय बैठकर उठे ताकि चक्कर न आने पाए। बैठकर 'योग-निद्रा' की विधि भी लगभग इसी प्रकार है, पर उसमें कुछ अन्य विशेषताएँ हैं। दोनों विधियों से गहरा शिथिलीकरण प्राप्त होता है।



न्यास एवं कवच

श्री बलराम बली, सूचना एवं जन-सम्पर्क विभाग, लखनऊ (उ. प्र.)

['मन्त्र-साधना' के प्रमुख अङ्ग हैं—१ सङ्कल्प, २ विनियोग, ३ ऋष्यादि - न्यास, ४ षडङ्ग-न्यास, ५ ध्यान, ६ जप, ७ कवच-स्तोत्रादि, ८ होम, ९ तर्पण, १० मार्जन, ११ ब्राह्मण-भोजन। इनके अतिरिक्त अन्य अनेक बातें हैं। खेद है कि इन सबके विषय में जैसा ज्ञान लोगों को होना चाहिए, वैसा है नहीं। लेखक ने 'न्यास' एवं 'कवच' के विषय में जो परिचर्चा प्रारम्भ की है, उसके प्रति विद्वान् साधकों का ध्यान जाना चाहिए और 'साधना' के प्रत्येक अङ्ग पर क्रमानुसार ऐसा प्रकाश डालना चाहिए, जिससे सभी लोग उसके महत्त्व को हृदयङ्गम कर सकें।—सं०]

जीवन में आनेवाले दैहिक, दैविक तथा भौतिक कष्टों के निवारण के लिए ऋषियों ने विभिन्न देवताओं की साधना का आविष्कार किया। जैसा कि सर्व-विदित है, एक ही औषधि हर कष्ट का निवारण नहीं कर सकती और विभिन्न रोगों के लिए विभिन्न औषधियों का प्रयोग किया जाता है। इसी प्रकार विभिन्न कष्टों के निवारण के लिए विभिन्न प्रयोगों की आवश्यकता होती है।

जिस 'ऋषि' ने जिस साधना को सम्पन्न कर कष्ट से मुक्ति पाई या दिलाई, वही उस साधना अथवा 'प्रयोग' का ऋषि कहलाया। उसी ने सम्बन्धित 'देवता' के 'मन्त्र' को छन्द, शक्ति, बीजादि से यथा-स्थान समन्वित कर साधना का मार्ग प्रशस्त किया। ऋषि, शक्ति, बीज, कीलकादि ही 'विनियोग' बनाते हैं। इस 'विनियोग' के आधार पर ही हम मन्त्रों की साधना द्वारा अभीष्ट कामना-प्राप्ति हेतु 'प्रयोग' करते हैं। यहाँ यह ज्ञातव्य है कि विभिन्न प्रयोगों में विभिन्न न्यासों का उपयोग होता है। विभिन्न कार्यों के लिए 'न्यास' भी अलग-अलग होते हैं। किसी 'न्यास' से धर्म की, किसी 'न्यास' से अर्थ की और किसी 'न्यास' से मोक्ष की प्राप्ति होती है। किसी मन्त्र की साधना में न्यास पूर्ण न होने से मन्त्र का अर्द्धाङ्ग ही रह जाता है और साधना सफल नहीं होती।

विद्वानों से प्रार्थना करना चाहूँगा कि वे कृपया विस्तार से लिखें कि किसी 'न्यास' से क्या लाभ होता है अथवा क्या हानि हो सकती है? किसे किस प्रकार का 'न्यास' करना चाहिए अथवा नहीं करना चाहिए और क्यों? जैसे—'षोढा-न्यास' के विषय में कहा जाता है कि इस 'न्यास' का सिद्ध पुरुष किसी व्यक्ति के प्रणाम का उत्तर नहीं देता। यदि उत्तर देता है, तो प्रणाम करनेवाले का शरीर फट सकता है आदि।

मुझे न्यासों के सम्बन्ध में ज्ञान नहीं है और अन्य बहुत से लोगों को न होगा। जिन महापुरुषों को इन न्यासों का ज्ञान हो, वे इन्हें प्रकाश में लाने की कृपा करें, जिससे हित-अहित का पूर्ण ज्ञान पाकर ही साधक आगे बढ़ें। मेरे विचार से यह 'शोध' का विषय हो सकता है।

यहाँ यह भी प्रश्न उठता है कि बहुत से मन्त्रों में अथवा 'शाबर'-मन्त्रों में न्यास नहीं होते। तुलसी-कृत 'रामायण' शाबर मन्त्रों से परिपूर्ण है। इस युग में ये बहुत ही अचूक हैं। मैंने जितने भी प्रयोग किए, सभी सफल रहे। अधिकांश में तो दस घण्टे के अन्दर ही फल दृष्टि-गोचर होने लगा। रामायण के 'शाबर' - मन्त्रों से सभी कार्य किए जा सकते हैं। अतिरिक्त साधना की आवश्यकता भी

नहीं पड़ती। 'शाबर'-मन्त्रों का क्या कहना ! केवल—मेरी भक्ति, गुरु की शक्ति, फुरो मन्त्र, ईश्वरी बाधा !

अब बात आती है 'कवच' की। यह भी उतना ही महत्व-पूर्ण है, जितना 'न्यास'। बिना 'कवच' के मन्त्र-सिद्धि कदापि नहीं मिलती। 'कवच' के ज्ञान से तत्काल सिद्धि प्राप्त हो जाती है, ऐसा स्पष्ट कथन मिलता है। कहा तो यहाँ तक गया है कि अभीष्ट मन्त्र से भी अधिक कवच का महत्व है। अतः 'कवच' का पाठ करना ही चाहिए। 'कवच' एक ऐसी विधा है, जिसके प्रयोग से साधक साधना के क्षेत्र में निर्विघ्न आगे बढ़ता रहता है। 'कवच-पाठ' से एक ओर जहाँ शरीर तथा आस-पास का वातावरण सुरक्षित रहता है, वहीं 'कवच' में वर्णित कार्य सम्पन्न होते हुए साधक का उत्साह बढ़ता रहता है।

'कवच' का ज्ञान न होने से अल्पज्ञ साधक अपना तथा अपने जनों का अहित कर बैठता है। यथा—'सुदर्शन-कवच' और 'नृसिंह-कवच' (वैरी हरण प्रयोग) अथवा इसी प्रकार के अन्य 'कवच' का प्रयोग गृहस्थ को अपने घर में कभी न करना चाहिए क्योंकि इनका प्रतिफल परिवार को भी भोगना पड़ेगा। 'षट्-कर्म' तो किसी को घर में करने ही नहीं चाहिए। 'कवच' का अर्थ है—किसी वस्तु को आच्छादित करना—सुरक्षित करना। अतः सम्बन्धित देवता के विभिन्न नामों, बीज, शक्ति, ऋषि आदि को शरीर के विभिन्न अङ्गों पर धारण कर अपने शरीर को तथा वातावरण को भी सुरक्षित कर लेना चाहिए। इससे साधना में बाधा नहीं आती और मन्त्र शीघ्र चैतन्य हो जाते हैं।

बहुत से लोग 'कवच' की 'फल - श्रुति' का पाठ इसलिए नहीं करते कि यह तो 'कवच' का फल मात्र है, जो 'कवच - पाठ' से मिल ही जायगा, किन्तु घेरे विचार से 'कवच' को सिद्ध करने के लिए उसकी 'फल-श्रुति' का सिद्ध होना भी आवश्यक है, क्योंकि इससे जब कभी 'कवच' प्रयोग करने की आवश्यकता पड़े, तो उसी 'फल - श्रुति' के अनुसार 'सङ्कल्प' लेकर पाठ करने से अभीष्ट - सिद्धि वैसे ही मिलती है, जैसे लक्ष्य पर मारा गया तीर। जब लक्ष्य सिद्ध नहीं होगा, तो निशाना कैसे ठीक बैठेगा ?

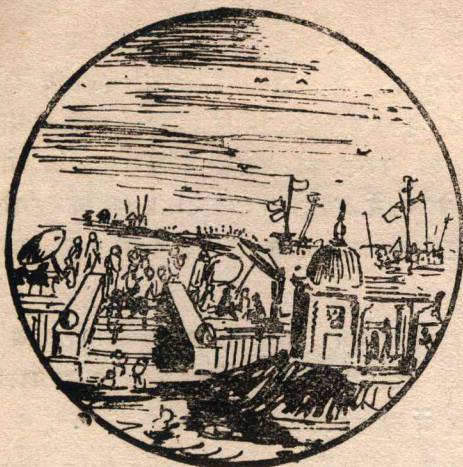
अन्त में 'चण्डी'-परिवार से तथा विद्वान् पाठकों से प्रार्थना है कि इस विषय पर उचित प्रकाश डालने की कृपा करें।



कौल-कल्पतरु चण्डी

'चण्डी' मासिक पत्रिका की विशेषता यह है कि यदि आप इसे ध्यान से पढ़ने की कृपा करेंगे, तो आपको हिन्दू-धर्म के 'व्यावहारिक पक्ष' को समझने में बड़ी सरलता होगी। 'हिन्दू-धर्म' केवल एक सिद्धान्त या दर्शन मात्र नहीं है। उसका ज्ञान-मय क्रियात्मक पक्ष भी है और वही वास्तविक महत्व-वाला है। अतः निवेदन है कि 'चण्डी' मासिक पत्रिका के सदस्य आज ही बनें।

वार्षिक मूल्य ६५-०० रु०। एक प्रति ६-०० रु०



कुमार्यु के इष्ट-देवता :

गोलू देवता (गौर भैरव)

श्री देवकीनन्दन तिवारी, भरद्वाजपुरम्, प्रयागराज

“वर्ष भर में हजारों पोस्ट-कार्ड, अन्तर्देशीय पत्र, बन्द लिफाफे, स्टाम्प पेपर पर लिखी अपीलें, पत्र-पत्रिकाएँ—शायद ही किसी देवता को सम्बोधित कर उनके मन्दिर में, मसजिद में, गुरु - द्वारा या गिरजा-घर में भेजी जाती होंगी, लेकिन ‘कुमार्यु - क्षेत्र’ में स्थित ‘चितई’ के ‘गोलू देवता’ के मन्दिर में आज के वैज्ञानिक युग में भी यह क्रम जारी है, जिसे प्रत्येक श्रद्धालु या यात्री स्वयं देख सकता है।”

कुमार्यु-क्षेत्र में बसे पुराने नगर अल्मोड़ा से लगभग १० किलोमीटर की दूरी पर ‘चितई’ नामक ग्राम में एक बहुत प्राचीन मन्दिर ‘गोलू देवता (गौर भैरव)’ का है। यह मन्दिर अल्मोड़ा-पिथौरागढ़ मार्ग के किनारे पर स्थित है। यहाँ प्रति-दिन सैकड़ों यात्री ‘गौर भैरव’ के दर्शन करने और अपनी अभिलाषा पूरी करने की प्रार्थना करने आते हैं। कुमार्यु-क्षेत्र का यह इष्ट-मन्दिर सैकड़ों वर्षों से न जाने कितने श्रद्धालुओं की मनोकामना पूर्ण कर चुका है।

किम्बदन्तियों के अनुसार ‘गोलू देवता’ का अवतार समाज में व्याप्त कुरीतियों को समाप्त करने के लिए ही हुआ था। जन्म के समय नन्हें बालक को लकड़ी के बक्से में बन्द करके नदी में बहा दिया था, लेकिन बालक बच गया और उसने बड़े होकर अपने प्रताप से समाज के दुःख दूर किए। कालान्तर में ‘गौर भैरव’ के मन्दिर की स्थापना हो गई और आज दिन तक लोग ‘हनुमान जी’ के समान ‘गौर भैरव’ को ‘अमर’ ही समझते हैं।

कुमार्यु-क्षेत्र में देवताओं के अनेकानेक चमत्कार दिखाई देते हैं। अनेक पुरुषों या स्त्रियों में देवी का आधिर्भाव होते देखा गया है और उसे समाज ने मान्यता भी दे रखी है। इसी प्रकार कुमार्यु-क्षेत्र में ‘गोलू देवता’ भी अपनी छाया के रूप में किसी व्यक्ति में अवतरित होते हैं तथा अपने भक्तों के दुःखों का निवारण करते हैं।

‘चितई’ में स्थित मन्दिर की मान्यता दूर-दूर तक है और इष्ट-देव के रूप में ‘गौर भैरव’ की पूजा-अर्चना करने सैकड़ों नर-नारी प्रति-दिन इस मन्दिर में आते हैं। वर्तमान समय में अल्मोड़ा एवं पिथौरागढ़ जिलों के विकास के नाथ पर सैकड़ों कार्यालय खुल गए हैं, जिनमें मैदानी क्षेत्र के भी अधिकांश और कर्मचारी कार्य-रत हैं। इन लोगों में भी ‘गौर देवता’ के प्रति वही श्रद्धा - भक्ति देखने को मिलती है।

‘कूर्माञ्चल-क्षेत्र’ अभी भी अपराधों की दुनिया से अछूता ही है। तथापि जमीन - जायदाद के मुकदमें यहाँ भी बहुत चला करते हैं। यहाँ के गरीब निवासी मुकदमों की अपीलें जिला - जज के यहाँ तक ही करते हैं। कागजी खाना - पूरी, दस्तावेजों की कमी या पैरवी की उपेक्षा के कारण यदि कोई व्यक्ति न्याय नहीं पाता, तो वह दो या पाँच रुपए के ‘स्टाम्प पेपर’ में अपनी अपील टाइप कराकर ‘गोलू देवता’ के मन्दिर के अन्दर बँधे हुए लोहे के तारों में बाँध देता है—इस आशा से कि कभी - न - कभी ‘गोलू देवता’ उसकी जरूर सुनेंगे और उसे न्याय मिलेगा।

इसी प्रकार विद्यार्थी अपनी परीक्षा में उत्तीर्ण होने की कामना, सेना का जवान अपनी प्रोन्नति की कामना, कोई बीमार अपने स्वस्थ होने की कामना का पत्र ‘चितई’ के ‘गोलू देवता’ के नाम पोस्ट-कार्ड या अन्तर्देशीय पत्र में लिखकर भेजता है, जो इस मन्दिर में लगा दिया जाता है।

इस मन्दिर में वसन्तीय एवं शारदीय—दोनों नवरात्रियों में विशेष पूजा, बलि आदि कार्यक्रम आयोजित होते हैं। ‘कुमायूँ-क्षेत्र’ का यह ‘शक्ति - पीठ’ अपने - आप में आज भी भक्तों की भीड़ से भरा रहता है। इस पीठ की मान्यता का उपहास करनेवाले लोगों को इसका फल भी मिलते देखा गया है। इस सम्बन्ध में एक घटना बहुत प्रचलित है। यथा—

‘भारतीय प्रशासनिक सेवा’ के बहु - प्रतिष्ठित अधिकारी श्री माताप्रसाद, आई० ए० एस० अल्मोड़ा में जिलाधिकारी के पद पर कार्य-रत थे। एक बार वे ‘अल्मोड़ा’ से ‘पिथौरागढ़’ जा रहे थे। उनकी गाड़ी जब मन्दिर के निकट पहुँची, तो जिज्ञासा-वश उन्होंने अपने अर्दली से मन्दिर के आस-पास भीड़ होने का कारण पूछा। अर्दली ने ‘शक्ति - पीठ’ का वर्णन किया और जिलाधिकारी महोदय से मन्दिर में चलकर दर्शन करने का आग्रह किया। जिलाधिकारी महोदय शीघ्रता में थे, अतः दर्शन करने को टाल दिया। अपनी यात्रा से वापस आने के उपरान्त श्री माताप्रसाद का स्वास्थ्य खराब रहने लगा। लगभग छः मास चिकित्सा कराने पर भी लाभ नहीं हुआ। तब एक दिन अर्दली ने जिलाधिकारी की धर्म-पत्नी से उस दिन की घटना का उल्लेख किया कि किस प्रकार जिलाधिकारी महोदय ‘इष्ट - देव’ का दर्शन करना टाल गए थे। धर्म-पत्नी को व्याकुलता सताने लगी और वे तुरन्त ही गाड़ी से ‘चितई के मन्दिर’ गईं। पूजा-अर्चना कर अपने पति की ओर से क्षमा-याचना की। शीघ्र ही जिलाधिकारी श्री माताप्रसाद न केवल स्वस्थ ही हो गए, अपितु दिनों-दिन उन्नति करते गए।

वैज्ञानिक युग में उक्त सभी बातें अविश्वसनीय - सी अवश्य लगती हैं, लेकिन भारत-भूमि के ‘शक्ति-पीठों की मान्यता’ दिन-प्रति-दिन बढ़ती ही जा रही है और इनके भक्तों में, डाक्टर, इंजीनियर, आई० ए० एस०, पी० सी० एस० तथा विदेशी नागरिकों की संख्या जिस प्रकार बढ़ती दिखाई देती है, उससे वह अविश्वसनीयता समाप्त हो रही है। ‘कूर्माञ्चल-क्षेत्र’ का यह ‘शक्ति-पीठ’ भी सभी मान्यताओं में आजकल श्रेष्ठ ‘सिद्ध-पीठ’ के रूप में प्रख्यात है।



सिद्धि मार्ग के पथिक

पं० कमलाकान्त मिश्र के जीवन-आलोक में

• डा० रमेशचन्द्र वर्मा, पञ्चगछिया, सहरसा (बिहार)

[गताङ्क का शेषांश]

आध्यात्मिक साधनाओं की विकास-यात्रा का सफल सोपान—‘सत्सङ्ग’

‘सहरसा’ नगर में अभिषिक्त अथवा पूर्णाभिषिक्त साधकों के लिए उन्होंने पर्व-पूजन का विधान निर्धारित कर दिया था। इन पूजनों में वे अवश्य उपस्थित होते। डा० रमेशचन्द्र वर्मा के यहाँ अमा-वास्या श्यामा - पूजन, श्री अमरेन्द्रकुमार लाल के यहाँ शुक्लाष्टमी को, श्री सुरेशलाल दास के यहाँ संक्रान्ति को तारा-पूजन, श्री गणेशलाल दास के यहाँ कृष्ण पक्ष की अष्टमी को काली-पूजन, श्री सतीश-चन्द्र वर्मा के यहाँ प्रतिपदा को तारा-पूजन और श्री यदुनाथलाल दास के यहाँ द्वितीया को श्यामा-पूजन। इन्हीं दिनों इन साधकों के यहाँ साधना-सत्सङ्ग होता। चक्र-पूजन या महा-पूजा के अवसर पर वे कहते कि ‘कृष्णायां वा चतुर्दश्यामष्टम्यां वा समाहितः, ददाति प्रति-गृह्णाति नान्यथेषा प्रसीदति।’ के अनुसार माँ को जो चढ़ाया जाता है, माँ हजार गुणा करके हमें लौटा देती है। उन्होंने साधकों से कहा कि ‘अरे भाई, केवल मैं यह बात नहीं कह रहा हूँ। रामकृष्ण परमहंस ने भी ऐसा ही कहा है।’ चक्र - पूजा को महा-पूजा बताते हुए वे बार-बार कहते, ‘यहाँ ब्रह्म का साक्षात्कार होता है। ‘भोक्त-भोग्य’—सब तो ब्रह्म ही है। सब माँ है—साधक, हवन की सामग्री और साध्य।’

सत्सङ्ग को वे अपनी साधना ही नहीं, सभी प्रकार की आध्यात्मिक साधनाओं की विकास-यात्रा का सफल सोपान मानते थे। इसीलिए अपने शिष्यों में जहाँ कहीं भी जाते, साधना - सत्सङ्ग की स्थापना करते। अद्वैत शक्ति - साधना की अनेक शाखाएँ इसी कारण उन्होंने कई स्थानों पर स्थापित कीं। हाँ, इस स्थापना के प्रेरक - स्रोत के रूप में पूज्य देवीदत्त शुक्ल और ‘कुल-भूषण’ रमादत्त शुक्ल जी का नाम वे अवश्य लेते। वे ‘चण्डी’ द्वारा दिए जानेवाले प्रोत्साहन का उल्लेख करते और कहते, ‘पिछले कार्य-क्रम का विवरण उन्होंने छपा है और छापकर सत्सङ्ग-बन्धुओं का उत्साह वद्धित किया है।’ सत्सङ्गी बन्धुओं से ‘चण्डी’ की ग्राहक-संख्या बढ़ाने का आग्रह करते। यह बात दूसरी है कि उनके आग्रह के अनुकूल ‘चण्डी’ की ग्राहक-संख्या नहीं बढ़ी। इसके कई कारणों में एक कारण रहा ग्रामीण लोगों की आर्थिक विपन्नता। लेकिन, वे उन्हें ‘चण्डी’ पढ़ने को देते। जिन्हें पढ़ना न आता, उन्हें अपने आप या किसी दूसरे पढ़े-लिखे लोगों से पढ़ाकर सुनाते। शिष्यों के बीच ‘चण्डी’ और ‘चण्डी’-पत्रिका से जुड़े परिवार के सदस्यों का पूरा परिचय वे देते। एक-आध किसी पुराने विचार के तान्त्रिक साधक ने उनसे कहा कि ‘रहस्य को सर्व-सामान्य के बीच प्रचारित करना उचित नहीं।’ तो वे तुरन्त ‘चण्डी’ के सरदार चन्द्रो जी सम्भा जी राव आंग्रे द्वारा सम्पादित वर्ष २०, संख्या-४, आषाढ़ शुक्लाष्टमी सं. २०१८ अर्थात्

१९६१ में प्रकाशित सम्पादकीय का उल्लेख कर कहते—‘इन्हीं के कारण शाक्त - साधना में उत्तरोत्तर ह्रास होता गया है। वास्तव में, शाक्त - साधना के सम्बन्ध में ‘रहस्य’ - जैसी कोई चीज है ही नहीं।’ ‘चण्डी’-प्रकाशन के कार्य को वे ‘धर्म-संरक्षण’ और ‘लोक-कल्याण’ का कार्य मानते थे। लोगों से कहते—‘प्रभु की ‘कृपा’ पानी है, माँ की ‘दया’ लेनी है, तो सत्सङ्ग में भाग लो—‘बिनु विवेक सत्सङ्ग न होई, राम-कृपा बिनु सुलभ न सोई।’ बिन्दु जी के एक पद को गाकर कहते—

‘भजन श्याम - सुन्दर का करते रहोगे, तो संसार - सागर से तरते रहोगे।

दया - नाथ बेशक मिलेंगे किसी दिन, जो सत्सङ्ग - पथ से गुजरते रहोगे ॥”

सत्सङ्ग में वे गुरु-वन्दना, इष्ट-चिन्तन, ‘कुण्डलिनी’ - उत्थापन, शक्रादि - स्तोत्र का पाठ और साधना-सम्बन्धी विभिन्न तत्त्वों पर प्रवचन देते। सामान्यतया वे ही प्रवचन देते।

‘अघटन-घटना-पटीयसी’ मैथ्या के प्रति पूर्ण विश्वास

मानव जीवन के सभी कार्य पूर्व - नियोजित हैं और व्यक्ति स्वयं कुछ नहीं करता; जो कुछ करती है, वह मैया करती है। माँ काली के प्रसिद्ध साधक रामप्रसाद जी के गीत—‘सकल तोमार इच्छा, इच्छा - मयी तारा तुमि, तोमार कर्म तुमि करए माँ, लोक बोले आमि करी’ की सत्यता का आभास उन्होंने मुझे दो प्रसङ्गों पर कराया। सन् ७४ में जब सरकार ने सभी खाद्य सामग्रियों के थोक व्यापार पर अपना अधिकार कर लिया था, तब बाजार से खाने की सारी सामग्री देखते - देखते ही गायब हो गई। संयोग ऐसा हुआ कि उसी बीच एक दिन बारह बजे दोपहर किसी गाँव से वे मेरे यहाँ आए। पत्नी नागेश्वरी देवी ने मुझसे कहा कि ‘गुरु महाराज आ गए हैं, अब क्या होगा? घर में तो कोई सामग्री है ही नहीं कि उन्हें भोजन करवाया जाय।’ मैंने कहा, ‘कोई बात नहीं। अभी तो वे आ ही रहे हैं, बातचीत करेंगे, स्नान करेंगे, पूजा करेंगे और तब तक कुछ व्यवस्था हो जायगी।’ मैं भीतर से कुछ चिन्तित था, लेकिन पत्नी को ढाढ़स दे रहा था क्योंकि सब काम तो नियोजित है, मुझे क्या करना है!

मैं जब गुरु महाराज को स्नान करा रहा था, तो देखता हूँ, मेरे गाँव का पुराना नौकर ‘फगुआ’ माथे पर एक डाला और हाथ में एक बर्तन लटकाए आ रहा है। गुरु-देव को स्नान कराकर जब मैं अपने आँगन में आया, तो पत्नी ने मुझसे मुसुकाते हुए कहा कि ‘देखिए, गाँव से पवित्र चूड़ा और दही आ गया है।’ गुरु महाराज ने पूजनोपरान्त भोजन किया। पवित्र सामग्री चूड़ा और दही देखकर उनका मन प्रसन्न हो गया। उन्होंने पूछा—‘यह कहाँ से आया है?’ मैंने सारी कहानी कह सुनाई। उन्होंने कहा कि ‘अघटन-घटना-पटीयसी है वह!’

ऐसा ही एक अनुभव अमावास्या के सत्सङ्ग पर हुआ। अभिषेक के बाद अमावास्या को पूर्व-पूजन करना मैंने प्रारम्भ कर दिया था, लेकिन कालेज में वेतन मिलने में कठिनाई रहती थी। वेतन अनियमित मिलता था और वह भी थोड़ा-थोड़ा। जब पैसे आए, तो मिला; पैसे नहीं आए, तो नहीं मिला। सन् चौंसठ में आठ महीने तक वेतन नहीं मिला था। आशा में था कि कालेज से कुछ मिल जाएगा। नहीं, तो किसी साथी से माँग लूँगा, लेकिन दोनों में से कोई कार्य नहीं हो सका। चार बजे के लगभग कालेज से आया। पत्नी ने कहा कि—‘आज पूजा कैसे होगी? पैसे तो हैं नहीं। गुरु महाराज भी आएंगे। कम-से-कम पूजा की कुछ सामग्री तो होनी ही चाहिए।

उन दिनों मात्र मैं और मेरी पत्नी ही अभिषिक्त थे। गुरु महाराज की उपस्थिति भी होती थी। कम-से-कम बीस रुपए खर्च पड़ते थे, लेकिन उन्हें भी जुटा सकना कठिन था। मैंने कहा—‘जैसा होगा, देखा जायगा। केवल पूजा और सहस्र-नाम का पाठ कर लूंगा।’ और मैं टहलने के लिए चला गया। साढ़े आठ बजे के लगभग लौटकर आया, तो देखा—मेरा सेवक महेन्द्र पाँच किलो की एक मछली बना रहा है और पत्नी सारी सामग्री बना रही है। उन्होंने कहा कि ‘एक विद्यार्थी मछली और बीस रुपए दे गया है।’ रात में अपने गाँव से गुरु महाराज आए। पूजा में सम्मिलित हुए। आनन्द-मयी माँ के आनन्द का लाभ मिला। प्रातःकाल गुरु महाराज को सारी स्थिति मैंने बताई। उन्होंने कहा—‘हाँ, कृपा-मयी माँ की कृपा का यही तो साकार रूप है।’ और वे गाने लगे—

कृपा की न होती जो आदत तुम्हारी, तो सूनी ही रहती अदालत तुम्हारी।

जो दीनों के दिल में जगह तुम न पाते, किस दिल में होती हिफाजत तुम्हारी ?

गरीबों की दुनिया है आबाद तुमसे, गरीबों से है बादशाहत तुम्हारी।

न मुलाजिम ही होते, न तुम होते हाकिम, न घर-घर में होती अदालत तुम्हारी ॥

‘मातृ’-स्थानों, शाक्त-बन्धुओं की खोज

गुरु-देव जहाँ कहीं भी जाते, यदि मैं साथ होता, तो वे वहाँ शाक्त साधकों की खोज अवश्य करते। मातृ स्थानों पर अवश्य जाते। १९६४ में मैं जमशेदपुर उनके साथ गया, तो वे ‘काली मन्दिर’ के बोधानन्दनाथ से मिले। उन्होंने गुरु महाराज को देखते ही यह जान लिया कि ये विशिष्ट साधक हैं और इनसे आलिङ्गन-बद्ध हो गए। बड़ी प्रसन्नता दिखाई उन्होंने।

१९७३ में गुरु जी पटना में ‘श्यामा आश्रम’ की प्रसिद्ध साधिका माई जी से मिले। उन्होंने भी इन्हें प्रसन्नतापूर्वक अपने हाथ से पान का बीड़ा दिया और कहा कि ‘बड़े भाग्य से आपसे मिलन हुआ।’

१९६२ में अपने गुरु-ग्राम ‘हरिनगर’ मुझे ले गए। वहाँ उन्होंने मुझसे कहा कि ‘पूज्य परम गुरु की समाधि पर जप करो।’ मेरे साथ ‘गङ्गापुर’ ग्राम के अभिषिक्त साधक रमापति जी थे। वहाँ ‘चक्रार्चन’ हुआ। परम गुरु पं० चण्डेश्वर जी झा के एक सेवक शिष्य बौकू ने भी ‘चक्र’ में भाग लिया। उन्होंने कई ऐसे प्रसङ्ग सुनाए, जिनमें ‘शव-साधन’ और ‘चिता-साधन’ के वर्णन थे।

इस क्षेत्र में कहीं भी विवाह हो या उपनयन, गुरु महाराज देख - भाल के लिए अवश्य बुलाए जाते क्योंकि उनके आ जाने पर लोगों को पूरा विश्वास होता कि अब इस कार्य का सम्पादन शास्त्रा-नुसार होगा। ऐसी ही दशा श्राद्ध के अवसर पर होती। उनके शिष्य को तो अन्य पण्डितों के आने या न आने का उतना ध्यान नहीं होता, जितना उनका होता।

सभी जगह उपस्थित होकर भी वे अपनी नित्य साधना और सन्ध्या - वन्दन को कभी नहीं छोड़ते। उनका अक्षरशः पालन करते। आचार-पद्धति और संहिता का पालन वे कठोरतापूर्वक करते और शिष्यों से भी इस बात की अपेक्षा रखते। शास्त्र-विपरीत आचरण करने पर वे तुरन्त बिगड़ भी जाते, लेकिन दूसरे ही क्षण फूल की तरह कोमल हो जाते, मोम की तरह पसीज जाते। वे तो नित्य-तृप्त, शुद्ध एवं तीक्ष्ण बुद्धिवाले जीवन्मुक्त महात्मा थे। वे इच्छा-रहित थे।

३०४ : पौष २०५० वि० जनवरी, १९६४ : चण्डी

गुरु-देव के तीन पुत्र हैं। बड़े पुत्र को संस्कृत से शिक्षा दिलाई। वे संस्कृत के अध्यापक हैं, नाम है पं० गणेश मिश्र। दूसरे पुत्र पं० भगवान् मिश्र शान्त एवं स्थिर स्वभाव के हैं। गुरु महाराज की अन्तिम वेला में उन्होंने ही सेवा की। तीसरे पुत्र पं० ताराकान्त मिश्र को भी शिक्षा देने की पूरी कोशिश गुरु जी ने की।

पूज्य गुरुदेव ने वंशानुगत गुरुत्व के गौरव को अत्यन्त ही प्रामाणिकता के साथ निर्वाहित किया। उनकी सत्य-निष्ठा, अहैतुकी मातृ-चिन्तन, शिष्यों को चिताने के लिए किए जानेवाले प्रयत्न इस बात के प्रमाण हैं कि मिथिला की वंश - गत गुरु परम्परा - अन्नुपयुक्त नहीं है। गुरुओं को पूज्य गुरु महाराज के चरण - चिह्नों का अनुसारेण करते हुए इस परम्परा की भव्यता एवं उत्कृष्टता की रक्षा करनी चाहिए।

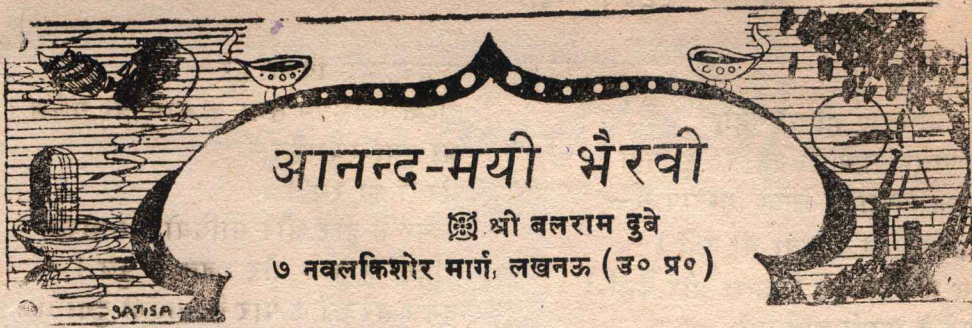


पाठकों के पत्र

ग्राम कसार, समीप बहादुरगढ़, जि० रोहतक (हरियाणा) से सिद्ध-तन्त्र-क्रिया-योग-विशेषज्ञ धर्मवीर शास्त्री लिखते हैं—

‘चण्डी’ वर्ष ५१, साधन-माला स्तम्भ के अन्तर्गत अप्रैल, ६२ में, अनावृष्टि-निवारक मन्त्र में ‘वं’ की जप-संख्या लिखी है, किन्तु अन्य मन्त्रों में जप-संख्या लिखी नहीं है। मई, ६२ में मृत्युञ्जय मन्त्र नहीं दिया गया है। भूत-शुद्धि-चतुर्थ विधि के चतुर्थ मन्त्र में एक अक्षर छूटा है। जून, ६२ में पृष्ठ ६५ पर पं० लक्ष्मणदत्त चतुर्वेदी का कथन ‘प्रयोग मत करना’ भ्रामक तथ्यों तथा अनुभव से परे है। यथार्थ यह है कि ‘प्रयोग’ से कोई हानि नहीं होती, वंश-वृद्धि भी होती है। अतः अनावश्यक रूप से ऐसी बातें नहीं लिखी जानी चाहिए। एक बात और, ‘प्रेत’ इत्यादि को उसकी इच्छानुसार वस्तु देने का परामर्श भी ठीक नहीं है। जून ६०, पृष्ठ ८६ पर ‘क्लीं’-बीज का अनुभूत प्रयोग है। इसमें ‘क्लीं’ बीज कागज पर कितना बड़ा और मोटा लिखा जाए, लिखा नहीं है। न ही किस रङ्ग की पेंसिल से लिखा जाए, यह लिखा है। जनवरी ६३ का नायिका - कवच गृहस्थ साधकों के लिए नहीं है। अतः कृपया इसे सभी पाठकों को सूचित कर दें। फरवरी, ६३ में लक्ष्मी-प्राप्ति-प्रयोग (८८) में मन्त्र, स्तोत्र या कवच नहीं दिया गया, जो अधूरा है। मार्च, ६३ में आसुरी-कल्प-विधान में ध्यान अशुद्ध है, मन्त्र भी अधूरा है, पुरश्चरण सं० त्रुटि-पूर्ण है, प्रयोग नहीं दिए गए हैं।

उत्तर—शास्त्री जी को धन्यवाद, किन्तु केवल त्रुटियाँ बताने से क्या लाभ? त्रुटियों का निवारण भी शास्त्री जी कर देते, तो उपयोगी होता। जप - संख्या, भूतशुद्धि, चतुर्थ मन्त्र का छूटा अक्षर, लक्ष्मी जी का मन्त्र, स्तोत्र, कवच और आसुरी का ध्यान, मन्त्रादि यदि शास्त्री जी को ज्ञात हैं, तो लिखने की कृपा करें। उन सबको सधन्यवाद प्रकाशित किया जायगा। इसी प्रकार ‘प्रयोग’ की उपयोगिता, प्रेत के देय-विधान, ‘क्लीं’ - बीज की प्रयोग - विधि पर विस्तार से लिखें। ‘नायिका - कवच’ किसके लिए है—इस पर भी शास्त्री जी को प्रकाश डालना चाहिए।

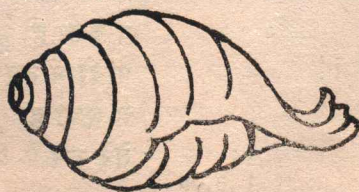


द्रौपदी तो बंटी है, सूक्ष्म पञ्च-तत्त्वों में ।
 पाण्डवों की जड़ता को रस-मय बहाती हुई,
 तू ही तो अर्जुन के रथ का किनारा हो—
 नौका हो—नाविक भी, रथ और रथी भी ॥
 मञ्जिल है, चिन्मय-समाधि जिस यात्रा की,
 सम्बल हो, सूक्ष्म-तम सहारा भी ।
 भिन्नता के रथ पर,
 सवार हुए रथियों का—
 साक्षी समन्वय भी,
 द्रष्टा, तटस्थता और तू ही कूटस्थता भी ॥
 भैरवी हो शक्ति काल-भैरव की—
 महा-काल भैरवी भयङ्करी ।
 हो सत्-चित् आनन्द-मयी लहरी भी ॥
 सङ्गिनी-सहेली हो—
 महा-त्रिपुर सुन्दरी की स्वयं सिद्ध-सारथी भी ।
 ओ, ऊर्जा की अक्षय-स्रोतस्विनी !
 तुझे दूँ भी, तो क्या दूँ ?
 जो स्वयं को न कर सकी आलोकित—
 उस दीपक की रोशनी ।
 तुझे दूँ भी तो क्या दूँ ?
 गुल होती हुई 'लौ' या—
 कामनाओं के मजार पर ज्योति क्षण-भंगुरी ।
 हर दीपक की कामना—
 कि जलती हुई 'लौ' पाट ले दूरियाँ !
 रोशनी के पुल पर—
 डूबते और उगते हुए सूर्य के मध्य !!
 ओ ऊर्जा की अक्षय स्रोतस्विनी !
 तुमसे लूँ भी, तो क्या लूँ ?

द्रौपदी के आंचल से बनी हुई बाती—
 तेल की गङ्गा का प्रेम-जल-स्नेह—
 एक सूर्य के आगमन की सफल प्रतीक्षा में,
 जलती हुई लौ-चिन्मय स्वयमेव !
 हर सूर्य की कामना—
 कि तेरे ही नयनों में झाँककर उगे,
 तुमसे ही शयन से पूछकर डूबे ॥
 पर, अनगिन परीक्षाओं का धुआँ—
 नेत्रों को खुलने नहीं देता !
 न रोकने ही देता है, सीता को रथ ।
 धरती के गर्भ से निकली तो सीता,
 पर घूमता रहा सरहद के बाहर ही रथ—
 जाने किस करुण-तम इतिहास की विवशता में
 जाने कितने छरों से जर्जर हुई छाती,
 अनगिन अनुभूतियों से दल-दल बनी धरती,
 रुकती भी नहीं है—
 दन्त-हीन अश्वों के मुँह में लगाम—
 कि हाँक सकूँ रथ !
 चल सकूँ, तेरी तलाश में भैरवी !
 निकल आते हैं, विवरों से छाँव के भी दाँत !
 पञ्च महा-देवियों की प्रार्थनाएँ—
 जो करनी थीं, कर लीं,
 पर—
 करने के पहले कभी सोचा भी नहीं,
 न देखा ही मुड़कर, कि आ रही हैं कि नहीं—
 पाँवों में नूपुर बजाती हुई 'भारती' ॥
 न देखा ही मुड़कर, कि स्वप्नों में उभरे हुए रूप,
 तेरे रूप के प्रतीक तो नहीं—

जो कर रही हैं पीछा,
वे अपनी प्रार्थनाएँ ही तो नहीं,
उन्हें बाणासुर कभी तो बनाया ही नहीं ।
तब क्यों जल रहा हूँ, उनके सन्ताप से—
मैंने तो किसी को जलाया भी नहीं ।
आवाहन भी करूँ, तो किसका और कहाँ ?
अटक गई हैं अपनी प्रार्थनाएँ,
सूखे हुए कण्ठ में नासूरी व्यथा,
पर मैंने तो गाँठ को खोला भी नहीं !
पर ओ देवताओं ! आ रहा है निकट—
माता भैरवी का रथ, प्रार्थना करें आप !
ज्ञान का हल जो आ गया है आपके अदृश्य—
हाथों में पिता श्री, प्रशस्त हो मार्ग ।
दादी विभिक्षणा के हाथों में कलश—
शीतल हो राह ।
सिर्फ पूजा के फूल हैं,
बैरी हथेली में हनुमत्-श्री !
चाहे, तो देख लें, खोलकर हथेलियाँ ।
आ रहा है निकट, माता भैरवी का रथ,
चाहे तो, जाने दें, या ध्यान करें,
बैठे कहीं आस-पास लम्हेटा घाट के—
पश्चिमी किनारों के पथरीले द्वीप पर ।
सुनकर, पत्नी की उल्लसित आवाज—
खोलूँ जब आँख, देख सकूँ—
रथासीन भैरवी का रथ ।
हनुमत् और भैरव के कन्धों पर पालकी ।
दौड़ता हुआ रथ, सम-तल, दल-दल—
पहाड़ियों पर सम-रस ।।
पहरा दें श्वानों की फौज लिए भैरव—
चौंसठ योगिनियों के साथ शिव-शङ्कर—

मञ्जुल करें, विघ्न हरे—
द्वादश गणाधिपतियों के साथ श्री गणेश ।
आ गया रथासीन—
भैरवी का रथ !
सागर में हीरे और मोतियों की नौका,
नदियों में सोने और रजत के पुल !
दुर्गम तरङ्गों के पार ले जाएँगी दुर्गा ॥
दो भाइयों को बहन के सूत्र में बाँधती—
हुई डोरो !
हाँ, द्वारका से पुरी तक हाँकती हुई रथ—
माता सुभद्रा-श्री ॥
बैठा हूँ जिस पर, वह रथ भी तुम्हारा है,
डोर भी तुम्हारी है, रथी और सारथी भी—
सिर्फ भ्रम ही हमारा है—
पुरी में रथों को खींचते हुए हाथों का
पश्चिमी किनारा, साम्राज्य हो जिसका द्वारका-
और पूर्वी किनारा तपो-भूमि !
उस पुरी के सिद्ध अग्नि-धाम में, सुभद्रा हों—
भाई श्रीकृष्ण और बलभद्र के साथ ।
शिव की तो शक्ति, भैरवों की भैरवी—
सूर्य की ऊर्जा हो, चन्द्रमा की कला,
सप्त-अग्नि-जिह्वा भी ॥
तू ही श्री-यन्त्र की सारथी-आनन्द-मयी भैरवी
आनेवाले समय की हर घड़ी—
तुम्हारी हो, पल-छिन सप्ताह-दिन—
मास और सारे सम्बत्सर भी !
पुष्प हों अम्लान, अर्चना के—
रात-दिन, वेदी हो पूजा की,
शेष बची जिन्दगी ।
शत नमन स्वीकार हो, आनन्द-मयी भैरवी !



साधनमाला

[मार्गशीर्ष-अङ्क (दिसम्बर, ६३) से आगे]

(१४०)

गायत्री-मन्त्र द्वारा

प्राण-वायु का विशेष संचार

आदि - गुरु शङ्कराचार्य ने उद्घोषित किया है कि गायत्री मन्त्र के साथ उसके प्रत्येक अक्षर के आधार पर निर्धारित देवियों के नामों का पाठ करने से सम्बन्धित नाड़ियों में प्राण-शक्ति का स्पन्दन प्रारम्भ हो जाता है, जिससे शरीरस्थ समस्त चक्रों की पंखुड़ियाँ प्रस्फुटित होती हैं। इसके साथ ही शरीर में प्राण-वायु का विशेष सञ्चार होने लगता है। फल यह होता है कि शरीरस्थ सभी विकार जल कर राख हो जाते हैं। साथ ही किसी प्रकार के रोग उत्पन्न नहीं होते। यही नहीं, यदि रोगाणु फैल गए हैं, तो वे सब नष्ट हो जाते हैं।

जिस प्रकार नाग के मस्तिष्क में मणि स्थित रहती है, उसी प्रकार मानव-मस्तिष्क के ललाट में भी विभूतियों से ओत-प्रोत मणि स्थित है। यह मणि प्राण-वायु के विशेष सञ्चार के प्रभाव से समस्त विभूतियों की किरणों से जगमगा उठती है। मणि के जगमगाते ही मनुष्य केवल रोगों पर विजय ही नहीं प्राप्त करता, अपितु वह सहज ही दीर्घायु होता है और उसे अनेक सिद्धियों की प्राप्ति होती है।

प्रातः-काल, ठीक सूर्योदय के समय गायत्री मन्त्र का जप करें। साथ ही चालीस नाड़ियों के नामों का पाठ करें। श्रद्धा और विश्वास के साथ ऐसा करने से कुछ ही दिनों में आप स्वयं अनुभव करेंगे कि आपके ललाट के भीतर स्थित मणि जगमगा उठी है। इससे आपके जीवन में नई स्फूर्ति और नई आशाओं का सञ्चार होगा। तब राजसी और तामसिक वृत्तियाँ शान्त होंगी।

गायत्री मन्त्र का तीन बार उच्चारण करें—

ॐ भूर्भुवः स्वः । तत् - सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि । धियो यो नः प्रचोदयात् । परो रजसे सावदोम् ।

ॐ—त्रिशक्त्यात्मक पर-ब्रह्म एवं परा-प्रकृति, भूः—पृथ्वी-लोक, भुवः—अन्तरिक्ष-लोक, स्वः—स्वर्ग - लोक, तत्—उस, सवितुः—सूर्य का, वरेण्यम्—श्रेष्ठ, भर्गः—तेज, देवस्य—देव का, धीमहि—हम ध्यान करते हैं, धियः—बुद्धियों (मन, बुद्धि, चित्त, अहङ्कार) को, यः—जो, नः—हमारी, प्रचोदयात्—प्रेरित करे (कल्याण के मार्ग पर) ।

उक्त गायत्री मन्त्र के ४० अक्षर और उनसे उद्भूत गायत्री-परक नाड़ियों के नामों के पाठ के लिए निम्न स्तोत्र का पाठ करें—

१ तत्त्वज्ञा ज्ञान - दात्री च , २ तत्त्व - ज्ञान - प्रबोधिनी ।
शास्त्रे ख्याता सदा वन्द्या, ३ सर्व - शास्त्रार्थ - वादिनी ।
विवुधेषु च विज्ञेया, ४ विबुधार्थ - स्वरूपिणी ।
सर्वज्ञा सर्वदा देवी, ५ तुर्या - मार्ग - प्रदर्शिनी ।
सनातना ६ रमा दिव्या, ७ वयोवस्था - विवर्जिता ।
रेवायाः रम्य - तीर्थे च, ८ रेवा - तीर - निवासिनी ।
आगमैक - सदा रूपा, ९ निखिलागम - वेदिनी ।
१० यमुना, ११ मोक्षदा रम्या, १२ भक्ताभीष्ट-प्रदायिनी ।
भक्ताभीष्ट - प्रदा १३ रम्या, १४ गोवर्धन - विवर्धिनी ।
शान्ति - प्रिया च विघ्नेशी, १५ देशोपद्रव - नाशिनी ।
वर - दात्री सर्वदा सा, १६ वक्र - तुण्ड - वर - प्रदा ।
१७ स्यन्द-रूपा, १८ योग-गम्या, ज्ञान-विज्ञान-सौख्यदा ।
१९ धीर - वन्द्या वन्दिता च, महा - वैरि - विनाशिनी ।
समग्रेषु च कार्येषु, २१ हित - कर्म - फल - प्रदा ।
२२ धिषणा, २३ योधिनी सान्या, २० योग-क्षेम-विहारिणी ।
२५ नव-सिद्धि-समाराध्या, २६ प्रभवा, २७ रोग-शमनी ।
२८ चोरघ्नी चोर-हन्त्री च, २९ दक्षिणामूर्ति-रूपिणी ।
वन्द्या च वेद - माता सा, ३० यात्रा-पाप-विवर्जिता ।
स्तोतव्या छन्दसां माता, ३१ तुरीय - पथ - गामिनी ।
३२ पर-ब्रह्मात्मिका ब्राह्मी, ३३ रागेशी, ३४ रमणी-प्रिया ।
३५ जगत्-प्रिया, ३६ सेव्यमाना परमा, ३७ सागराम्बरा ।
३८ वेदाक्षर-परीताङ्गी, ३९ दोहिनी, ४० माधवी तथा ।



(१४१)

सुन्दर-काण्ड का अनुभूत अनुष्ठान

• प्रस्तुतकर्ता—श्री जनार्दन शर्मा, ४८ ए तुलाराम बाग, प्रयागराज (उ०प्र०)

विध्याचल (उ० प्र०) के एक महात्मा के अनुसार उक्त अनुष्ठान की विधि यह है कि सर्व-प्रथम अपने पूजा-स्थान में श्री हनुमान जी का एक सुन्दर चित्र विधि - वत् प्रतिष्ठित कर लें। उस चित्र के सम्मुख दीपक एवं धूपबत्ती जलाकर रखें। चित्र का यथा-शक्ति भक्ति-भाव के साथ पूजन करें।

पूजन कर चुकने पर 'श्रीराम - चरित - मानस' के 'किष्किन्धा - काण्ड' की निम्न - लिखित पंक्तियों का पाठ हाथ जोड़ कर ११ बार करें—

कहइ रीछ - पति—'सुनु हनुमाना ! का चुप साधि रहेहु बलवाना ?

पवन - तनय बल पवन समाना, बुधि बिबेक विग्यान निधाना ॥

कौन सो काजु कठिन जग मांहीं, जो नहिं होत तात तुम पाहीं ।

११ पाठ कर चुकने पर 'सुन्दर-काण्ड' का आद्योपांत पाठ करें। तदनन्तर पुनः उक्त पंक्तियों का पाठ ११ बार करें। इस प्रकार यह 'एक पाठ' हुआ।

उक्त पाठ को ४५ बार करना है। इस अनुष्ठान को किसी भी मङ्गलवार के दिन श्री हनुमान जी के दर्शन करने के बाद प्रारम्भ करना चाहिए। प्रतिदिन तीन पाठ करें, तो १५ दिनों में अनुष्ठान पूरा हो जायगा। यदि तीन पाठ न कर सकें, तो प्रतिदिन एक ही पाठ कर ४५ दिनों में अनुष्ठान पूर्ण कर सकते हैं।

अनुष्ठान-काल में अपनी दिन-चर्या इस प्रकार बितानी चाहिए, जिससे श्री हनुमान जी प्रसन्न हों अर्थात् ब्रह्मचर्य, सत्य-वादिता, भगवान् श्री राम का गुणानुवाद, सत्सङ्ग आदि में तत्पर रहे।

इस अनुष्ठान को करने से सभी प्रकार की मनोकामनाएं निश्चय ही पूर्ण होती हैं। अनेक व्यक्तियों द्वारा यह अनुभूत है।



(१४२)

'श्रीराम-चरित-मानस' के सकाम-निष्काम प्रयोग

प्रस्तुत-कर्ता : श्री बलराम बली, सूचना एवं सम्पर्क विभाग, लखनऊ (उ. प्र.)

श्री राम - चरित - मानस के दोहे और चौपाइयों को सिद्ध करने का संक्षिप्त विधान—

किसी शुभ मुहूर्त में, गणेश-पूजन करके, मध्य रात्रि में एक वेदी बनाए। जिस चौपाई या दोहे को 'प्रयोग' में लाना हो, उसके अन्त में 'स्वाहा' जोड़ कर १०८ बार निम्न-लिखित पदार्थों से 'हवन' करे। इससे दोहे या चौपाई चैतन्य-मय हो जाते हैं।

‘हवन’-सामग्री इस प्रकार है—सफेद चन्दन का बुरादा, तिल, शुद्ध घी, शुद्ध चीनी, अगर, तगर, कपूर, शुद्ध केशर, नागर-मोथा, पञ्च-मेवा (१ मखाना, २ चिरौंजी, ३ छुहारा, ४ किसमिस, ५ गरी अथवा १ पिस्ता, २ बादाम, ३ किसमिस, ४ काजू, ५ अखरोठ), जौ, चावल, देवदारु, जावित्री, सुगन्ध-बाला, सुगन्ध-कोकिला । इस ‘हवन’-सामग्री में तिल का आधा चावल, चावल से आधा जौ, जौ से आधी चीनी, सबका चतुर्धांश घी रखे तथा अन्य सामग्री सामान्यनुसार रखे ।

साधारणतया ४० दिन में दोहे या चौपाई सिद्ध हो जाते हैं । ‘नव-रात्र’ में ६ दिन में, ‘दीपावली’ की मात्र एक रात्रि में, ‘ग्रहण’ के पर्व - काल में ही सिद्धि हो जाती है । जब तक अभीष्ट कार्य सिद्ध न हो जाए, तब तक ‘जप’ करना चाहिए, किन्तु ‘हवन’ एक ही दिन करना पर्याप्त है । चाहे, तो नित्य भी कर सकते हैं । आहुति की गिनती लाख और गाय के गोबर से बनी गोली से अथवा मात्र गाय के गोबर की गोली से करनी चाहिए । ‘ऊन’ का ‘आसन’ सभी के लिए प्रशस्त है । ‘कुश’ का ‘आसन’ केवल पुरुषों के लिए निर्दिष्ट है ।

१. विपत्ति-नाश के लिए

राजिव नयन धरें धनु सायक ।
भगत-विपत्ति-भञ्जन सुख-दायक ॥

२. विघ्न-नाश के लिए

सकल विघ्न व्यापहि नहि तेही ।
राम-सु - कृपा बिलोकहि जेही ॥

३. सङ्कट-नाश के लिए

जौ प्रभु दीन - दयाल कहावा ।
आरति - हरन बेद जसु गावा ॥
जपहि नामु जन आरत भारी ।
मिटहि कु-सङ्कट होहि सुखारी ॥
दीन - दयाल बिरिदु सम्भारी ।
हरहु नाथ मम सङ्कट भारी ॥

४. कलह-क्लेश-नाश के लिए

हरन कठिन कलि-कलुष-कलसू ।
महा - मोह-निसि-दलन दिनेसू ॥

५. आनन्द-मङ्गल के लिए

जब ते राम ब्याह घर आए ।
नित नव मङ्गल मोद बधाए ॥

६. दरिद्रता दूर करने के लिए

अतिथि पूज्य प्रिय-तम पुरारि के ।
कामद धन - दारिद-दवारि के ॥

७. ऐश्वर्य-प्राप्ति के लिए

जिमि सरिता सागर महुँ जाहीं ।
जद्यपि ताहि कामना नाही ॥
तिमि सुख सम्पत्ति बिनिहि बोलाए ।
धरम-सील पहि जाहि सुभाए ॥

८. सुख-सम्पत्ति-प्राप्ति के लिए

जे सकाम नर सुनिहि जे गावहि ।
सुख-सम्पत्ति नाना विधि पावहि ॥

६. ऋद्धि-सिद्धि के लिए

साधक नाम जपहि लय लाए ।

होहि सिद्ध अनिमादिक पाए ॥

१०. जीविका-प्राप्ति के लिए

बिस्व भरन - पोषन कर जोई ।

ताकर नाम भरत अस होई ॥

११. सभी प्रकार के उपद्रव-शान्ति के लिए

दैहिक दैविक भौतिक तापा ।

राम-राज नहि काहुहि ब्यापा ॥

१२. रोग-निवारण के लिए

राम - कृपा नासहि सब रोगा ।

जो एहि भाँति बनै सञ्जोगा ॥

१३. महा-मारी की रोक-धाम के लिए

जय रघुवंस बनज बन-भानू ।

गहन दनुज-कुल-दहन कृसानू ॥

१४. सिर-दर्द व अर्ध-कपारी दूर करने के लिए

हनूमान अङ्गद रन गाजे ।

हाँक सुनत रजनी-चर भागे ॥

१५. विष के प्रभाव को दूर करने के लिए

नाम प्रभाउ जान सिव नीको ।

काल-कूट फल दीन्ह अमी को ॥

१६. कुशल-क्षेम के लिए

भुवन चारि-दस भरा उछाहू ।

जनक - सुता रघुबीर बिआहू ॥

१७. सर्व-सुख-प्राप्ति के लिए

सुनहि बिमुक्त बिरत अरु विषई ।

लहहि भगति गति सम्पति नई ॥

१८. पारस्परिक प्रेम बढ़ाने के लिए

सब नर करहि परस्पर प्रीती ।

चलहि स्व-धर्म-निरत श्रुति नीती ॥

१९. यात्रा में सफलता के लिए

प्रबिसि नगर कीजै सब काजा ।

हृदय राखि कोसल-पुर-राजा ॥

२०. विद्या-प्राप्ति के लिए

गुरु - गृह गए पढ़न रघु-राई ।

अलप काल विद्या सब पाई ॥

२१. परीक्षा में सफलता के लिए

मोरि सुधारहि सो सब भाँती ।

जासु कृपा नहि कृपा अघाती ॥

२२. स्व-रक्षा के लिए

मोरे हित हरि सम नहि कोऊ ।

एहि अवसर सहाय सोइ होऊ ॥

२३. मुकदमा-बिवाद जीतने के लिए

पवन-तनय बल पवन - समाना ।

बुधि-विषैक - विग्यान - निधाना ॥

२४. शत्रु का सामना करने के लिए

कर सारङ्ग साजि कटि माथा ।

अरि-दल दलन चले रघु-नाथा ॥

२५. शत्रु को मित्र बनाने के लिए

गरल सुधा रिपु करहि मिताई ।

गोपद सिन्धु अनल सितलाई ॥

२६. शत्रुता का नाश करने के लिए

बयर न कर काहू सन कोई ।

राम - प्रताप विषमता खोई ॥

२७. शास्त्रार्थ में विजय पाने के लिए

तेहि अवसर सुनि सिव-धनु-भङ्गा ।

आयउ भृगु-कुल-कमल - पतङ्गा ॥

२८. खोई हुई वस्तु-प्राप्ति के लिए

गई बहोर गरीब - नेवाजू ।

सकल सबल साहिब रघु-राजू ॥

२६. नजर उतारने के लिए
स्याम गौर सुन्दर दोउ जोरी ।
निरखहि छबि जननी तृन तोरी ॥

३०. विचार-शुद्धि के लिए
ताके जुग पद-कमल मनावउँ ।
जासु कृपा निरमल मति पावउँ ॥

३१. संशय-निवृत्ति के लिए
राम - कथा सुन्दर - करितारी ।
संसय - बिहग उड़ावनि - हारी ॥

३२. ज्ञान-प्राप्ति के लिए
छिति जल पावक गगन समीरा ।
पञ्च रचित अति अधम सरीरा ॥

३३. मोक्ष-प्राप्ति के लिए
सत्य - सन्ध छाँड़े सर लच्छा ।
काल सर्प - जनु चले स-पच्छा ॥

३४. पापों से मुक्ति के लिए
अनुचित कहेउ बहुत अज्ञाता ।
छमहु क्षमा-मन्दिर दोउ भ्राता ॥

३५. श्री हनुमान जी की कृपा-प्राप्ति के लिए
सुमिरि पवन-सुत पावन नामू ।
अपने बस करि राखे रामू ॥

३६. श्री रामचन्द्र की कृपा-प्राप्ति के लिए
(१) प्रसीद मे नमामि ते ।
पदाब्ज भक्ति देहि मे ॥
(२) मङ्गल-भवन अमङ्गल-हारी ।
द्रवउ सो दसरथ अजिर-बिहारी ॥

(३) भगत-बछल प्रभु कृपा-निधाना ।
बिस्वबास प्रगढे भगवाना ॥
३७. श्री सीता जी की कृपा-प्राप्ति के लिए
जनक-सुता जग-जननि जानकी ।
अतिसय प्रिय करुना-निधान की ॥



(१४३)

नक्षत्र-दोष-शान्ति के प्रयोग

‘नक्षत्र-दोष-शान्ति’ के लिए दो प्रकार के ‘प्रयोग’ हैं । यथा—

(१) जिस नक्षत्र में रोग उत्पन्न हुआ हो, उस नक्षत्र के पशु को आकृति गेहूँ के आटे से बनाए । फिर उस आकृति के मुख में नीचे लिखे ‘चक्र’ के अनुसार विशेष वस्तु रखकर विधि-वत् पूजन करे और उसे दक्षिण दिशा की ओर किसी निर्जन स्थान में रखे । इससे ‘नक्षत्र-दोष-जनित’ सभी रोग शीघ्र दूर हो जाते हैं ।

(२) ‘नक्षत्र’ के देवता का ‘मन्त्र’-जप । १, ४, १३, १६, २०, २७ वें नक्षत्र में ‘मन्त्र’-जप की संख्या ५००० तथा अन्य में १०,००० है । २७ नक्षत्रों के देवता का विवरण नीचे दिए गए ‘चक्र’ से ज्ञात हो जाता है । साथ ही २७ नक्षत्रों के कष्ट-दिन, चरणानुसार कष्ट-दिन का विवरण भी स्पष्ट होता है ।

नक्षत्र	कष्ट-दिन	चरणानुसार कष्ट-दिन				देवता	पशु	वस्तु-विशेष
		प्रथम	द्वितीय	तृतीय	चतुर्थ			
अश्विनी	६	६	११	१०	२०	अश्विनीकुमार	वानर	गुड़-भात
भरणी	११	०	८०	४०	११	यम	वानर	गुड़-भात
कृत्तिका	६	६	११	१६	२८	अग्नि	बकरी	दही-जल
रोहिणी	७	७	६	१८	३०	ब्रह्मा	गाय	शाक
मृगशिरा	३०	६	५	७	१०	चन्द्र	मृग	उड़द
आर्द्रा	०	०	१८	०	०	शिव	गाय	रक्त एवं तृण
पुनर्वसु	७	७	१४	२	२१	अदिति	सुअर	परवल
पुष्य	७	७	७	२०	२१	बृहस्पति	बकरी	खीर
अश्लेषा	०	०	७	४१	०	सर्प	सुअर	घृत
मघा	२०	१५	७	१७	२०	पितर	वानर	तिल
पूर्व फाल्गुनी	मृत्यु	०	१५	०	३०	भग	वानर	मूंग, पुआ
उ० फाल्गुनी	७	७	१४	७	६०	अर्यमा	बैल	शाक
हस्त	१५	१५	१७	१५	०	रवि	भैंसा	कमल की जड़
चित्रा	११	११	६	१६	१६	विश्वकर्मा	चीता	तगर, पुष्प
स्वाती	मृत्यु	६०	१७	३०	०	वायु	बिल्ली	तिल
विशाखा	१५	१५	०	४	१३	इन्द्राग्नि	बाघ	गुड़-भात
अनुराधा	स्थिर	६०	१२	३६	३०	मित्र	मृग	कुलथी
ज्येष्ठा	मृत्यु	५६	६	६	४	इन्द्र	चूहा	धनिया
मूल	७	०	६	१५	६	राक्षस	बिल्ली	तिल
पूर्वाषाढ़	मृत्यु	०	१५	२४	१०	जल	घड़ियाल	वच
उ० आषाढ़	३०	३०	२४	२६	१६	विश्वेदेव	बैल	शाक
श्रवण	११	६०	२४	६	६	विष्णु	भैंस	रक्त
धनिष्ठा	१५	१५	४	२०	२१	वसु	घोड़ा	शाक
शतभिषा	११	०	४५	३	२	वरुण	वानर	पीपर
पूर्व भाद्रपद	मृत्यु	०	१२	०१	१६	अज-पद	न-मुख	चावल
उ० भाद्रपद	७	१०	२	६	१५	अहिर्बुध्न्य	न-मुख	चावल
रेवती	स्थिर	१८	१०	१६	२०	पूषा	वानर	गुड़-भात



(१४४)

अघोरास्त्र

मन्त्र—ह्रीं स्फुर स्फुर, प्रस्फुर प्रस्फुर, घोर-घोर-तर तनु-रूप ! चट चट, प्रचट प्रचट, कह कह, बम बम, बन्ध बन्ध, घातय घातय हुं फट् ॥५१ अक्षर

३१४ । पौष, २०५० वि०-जनवरी, १९६४ । चण्डो

विनियोग—ॐ अस्य अघोरास्त्र-मन्त्रस्य अघोर ऋषिः । त्रिष्टुप् छन्दः । अघोर-रुद्रः देवता । हलो बीजानि । स्वरा शक्तयः ('पद्मपादाचार्य'-हुं बीजं । ह्रीं शक्तिः) ममाभीष्ट-सिद्धयर्थे जपे विनियोगः ।

ऋष्यादि-न्यास—ॐ अघोर - ऋषये नमः शिरसि । त्रिष्टुप्-छन्दसे नमः मुखे । अघोर-रुद्र-देवतायै नमः हृदये । हुं-बीजाय नमः गुह्ये । ह्रीं-शक्तये नमः पादयोः । ममाभीष्ट-सिद्धयर्थे जपे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे (अञ्जलौ) ।

षडङ्ग-न्यास—ॐ ह्रीं स्फुर स्फुर अंगुष्ठाभ्यां नमः (हृदयाय नमः) । ॐ प्रस्फुर-प्रस्फुर तर्जनीभ्यां नमः (शिरसे स्वाहा) । ॐ घोर-घोर - तर-तनु - रूप मध्यमाभ्यां नमः (शिखायै वषट्) । ॐ चट चट, प्रचट प्रचट अनामिकाभ्यां नमः (कवचाय हुम्) । ॐ कह कह, वम वम कनिष्ठिकाभ्यां नमः (नेत्र-त्रयाय वौषट्) ॐ बन्ध-बन्ध, घातय घातय हुं फट् करतल-कर पृष्ठाभ्यां नमः (अस्त्राय फट्) ।

एकादश न्यास—१ ॐ ह्रीं स्फुर स्फुर नमः मूर्ध्नि । २ ॐ प्रस्फुर प्रस्फुर नमः नेत्रयोः । ३ ॐ घोर-घोर-तर नमः मुखे । ४ ॐ तनु-रूप नमः कण्ठे । ५ ॐ चट चट नमः हृदये । ६ ॐ प्रचट प्रचट नमः नाभौ । ७ ॐ कह कह नमः लिङ्गे । ८ ॐ वम वम नमः ऊरु-द्वये । ९ ॐ बन्ध बन्ध नमः जानु-द्वये । १० ॐ घातय घातय नमः जङ्घा-द्वये । ११ ॐ हुं फट् नमः पाद-द्वये ।

ध्यानम्—ॐ सजल-घनसमाभं, भीम-दंष्ट्रं त्रिनेत्रम् ।

भुजग-धरमघोरं, रक्त - वस्त्राङ्ग - रागम् ॥

परशु - डमरु-खड्गान्, खेटकं वाण-चापौ ।

त्रिशिख - नर - कपाले, विभ्रतं भावयामि ॥११

पूजा-यन्त्र—अष्ट-दल-पद्म, उसके मध्य कणिका में 'अमुकस्यामुकं कुरु कुरु' लिख-कर स्वर में वर्णों द्वारा वेष्टित शक्ति-बीज (ह्रीं) लिखे । केसर-समूह में 'अ क च ट त प य श'—अष्ट-वर्ग के आदि अक्षर लिखे । पत्र-मध्य में 'स्फुरादि तीन, तीन चट-चटान्त' मन्त्र-वर्ण लिखे । पत्र के अग्र-समूह में—"प्रचटादि घातय" तक लिखे । उसके बाहर पर-स्पर-विरोधी अग्नि-गृह-द्वय (षट्-कोण) लिखे । उसके कोणों में वर्मास्त्र (हुं फट्) लिखे ।

भू-गृह के मध्य में अङ्कित यह यन्त्र कलश-विधि से अनुष्ठित करे, तो समस्त दुःखों का नाश होता है । क्षुद्र, चौर, ग्रह-दोष सर्प, विष, भूत, अपस्मार-नाशक और सर्व-सम्पत्-प्रद यह प्रयोग है । (शारदायाम्) ।

गिरि-धारिणि, गीत-वाद्य-विमोहिनि, त्रैलोक्य - मोहिनि, देवि, दिव्याङ्ग-वस्त्र-धारिणि, दिव्य-ज्ञान-प्रदे, दिविषद्-मातः, सिद्धि-प्रदे, सिद्धि-स्वरूपे, सिद्धि-विद्योतातीतातीते, ख-मार्ग-प्रचारिणि, खगेश्वरि, खड्ग-हस्तिनि, खं-बीज-मध्य-गते ! ॐ ऐं ॐ ह्रीं ॐ श्रीं ॐ फट्, तां तीं तूं तैं तौं तः, हां हीं हूं हैं हौं हः, वां वीं वूं वैं वौं वः, च्फ्रें हफ्रें क्ष्रें अ कं चं टं तं पं यं शं । मातृका-चक्र-चक्रे, हासिनि ! ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः, श्लीं ह्रूं फट्, अं आं ऐं, इं ईं ऐं, उं ऊं ऐं, ऋं ॠं ऐं, ऐं ऐं ऐं, ओं औं ऐं, अं अः ऐं फट् । निर्वाण-रूपे, निर्वाणा-तीते, निर्वाण - दात्रि, निरंकुशिनि, निराकारे, निरञ्जनावतारिणि, षट् - चक्रेश्वरि, सह-स्रात्मे, महा-सूक्ष्म-सूक्ष्मे, सूक्ष्मातीत-सूक्ष्म-नाम-रूपिणि, महा - प्रलयान्त - एक - शेषाक्षिणि, संसाराब्धि-दुःख-तारिके, सृष्टि-स्थित्यन्त-कारिके, कर्मांलां वुंयूं ग्मांलां वुंयूं स्मौंलां वुंयूं क्ष्मांलां वुंयूं, ह्रीं धं छिधि, सुबुद्धि दद दद, मोक्ष-मार्गं दर्शय दर्शय, तवानुचरं कुरु कुरु, हिरि हिरि, धिमि धिमि धिमि । महा-डमरु-वादन-महा-प्रिये ! आं हूं हूं हूं हूं फट् । मम हृदये तिष्ठ तिष्ठ, सुफलं देहि देहि । ४७। सर्व-तीर्थ-फलं प्रदापय प्रदापय, सर्व-दान-फलं प्रापय प्रापय । ज्योति - स्वरूपिणि ! सर्व-योग-फलं कुरु कुरु, स्फों क्रों ह्रीं ऐं क्लीं सौः स्वाहा । श्रीमद्-बालायै स्वाहा ।



प्रेरणादायक पत्र

पं० राजेन्द्रकुमार अवस्थी, २ ज-१०, सेक्टर-५, गायत्रीनगर, हिरणमगरी, उदयपुर (राजस्थान)—३१३००१

“...‘चण्डी’ अङ्क ६, ७, ८ से पर्याप्त खुराक मिली है मन-मस्तिष्क को । सभी लेख विद्वत्ता-पूर्ण, सम-सामयिकतानुसार लिखे व चयनित किए गए हैं ।... श्री भैरवानन्दनाथ द्वारा की गई समीक्षाएँ अच्छी व उचित हैं । महर्षि अरविन्द, रमण, रामकृष्ण परमहंस, श्यामाचरण लाहिड़ी, रामप्रसाद, पहाड़ी बाबा, ‘राष्ट्र-गुरु’, गुप्तावतार बाबाश्री, पं० देवीदत्त शुक्ल, देवरहा बाबा, विशुद्धानन्द सरस्वती, नित्यानन्द, मुक्तानन्द, कविराज गोपीनाथ, हरिहरानन्दनाथ आदि व ‘चण्डी’ के पृष्ठों में स्थान पानेवाले अनगिन पुत्रों पर इस सदी को गर्व होगा । भारत के प्राणों के मूल स्पन्दन ये विभूतियाँ ही हैं ।

श्री बलराम दुबे के काव्य-प्रवाह में भावनाओं की मधुर सरसता है । श्री ओमप्रकाश शास्त्री शहडोल (बहुत कुछ हमारे अध्यात्म - लक्ष्य की साम्यता हठ, विश्वास व समर्पण—कार्य करने से ही होगा—पाया) । दीपावली अङ्क ८ व ‘दीपावली पूजा-विधि’ पुस्तक समयात्कूल ज्ञान-वर्द्धक है । ‘हिन्दी-तन्त्रसार’ आवश्यक, ज्ञान-वर्द्धक व महत्त्वपूर्ण संग्रहणीय कृति है ।... विगत २-३ वर्षों में ‘चण्डी’ अङ्कों में अपेक्षित सामग्री व स्तर बना हुआ है । चण्डी-परिवार को साधुवाद । हिन्दी तन्त्रसार, भाग २ बहुत प्रशंसनीय कृति है ।... प्रो० बामाचरण मिश्र, पं० ललन पाण्डेय आदि अङ्क ७ के लेखकों के लेख सुन्दर हैं ।”

जैसा जाना-समझा

❧ ज्योतिषी श्रीयुत जयरामभाई लक्ष्मणभाई भारद्वाज,
'चामुण्डा ज्योतिष केन्द्र', नेमीनाथनगर, अहमदाबाद (गुजरात)

'कार्य', 'कारण' और 'कर्ता'—इनके परस्पर अवलम्बन से ही सृष्टि का व्यवहार चलता है। 'मन' कर्ता है, 'देह' कारण है और 'संसार' कार्य है। इसी प्रकार पृथक्-पृथक् कार्य के लिए जगत् में पृथक्-पृथक् शक्तियाँ पृथक्-पृथक् समय पर प्रगट होकर पृथक्-पृथक् नाम और स्वरूप को धारण करती हैं। मुख्य शक्तियाँ १०८ हैं। जैसे 'देह' से 'देही' पृथक् नहीं है; देह के आश्रय से रहित होकर प्राण रह नहीं सकता और प्राण का आधार न हो, तो देह टिकता नहीं। वैसे ही 'माया' और 'ब्रह्म' को अलग नहीं कर सकते। दूसरे के अवलम्बन से ही पहले का अस्तित्व है।

'ब्रह्म सत्यं, माया मिथ्या'—वाक्य से यह प्रतिपादित होता है कि 'ब्रह्म' का सत्य होना 'माया' से ही प्रकट होता है। ऐसे ही शरीर है, तो सब कुछ है। इसमें भी देह, प्राण और मन का सम्बन्ध दिखाई देता है। 'मन' ही ईश्वर है, प्रकृति है। 'मन' की अगाध शक्ति है। व्यवहार तथा कार्य में 'मन' सर्वोपरि रहता है। इस 'मन' की अनेक वृत्तियाँ (शक्तियाँ) हैं। यही वृत्तियाँ जगत् में सर्व-काल और सर्व-स्थल में क्रिया-शील रहती हैं।

'मन' की उक्त वृत्तियाँ द्विगुणी, त्रिगुणी, चतुर्गुणी और अनेक-गुणी होती हैं। इनके स्वरूप विविध होते हैं तथा इनकी उपलब्धियाँ भी अलग-अलग होती हैं। इनमें 'आन्तर' वृत्तियाँ हैं, तो बाह्य वृत्तियाँ भी हैं। जिस वृत्ति में इच्छा प्रधान है, वह 'मन' के साथ ओत-प्रोत होती है क्योंकि 'मन' और 'इच्छा' को पृथक् करना कठिन है। मन की वृत्तियों या शक्तियों पर विचार करें—

१ 'इच्छा' महान् शक्ति है। इसके अनेक स्वरूप हैं। यथा—सदिच्छा, अनिच्छा, महेच्छा इत्यादि। इच्छा अद्वय है और अनेक को भोगनेवाली ईश्वरी वही है।

२ 'आशा' और 'निराशा'। 'आशा' अमर है और हठीली है। 'निराशा' विधवा तो है ही, बाँझ भी है। ३ 'आकांक्षा'—महत्वाकांक्षा है।

४ अपेक्षा, ५ प्रतीक्षा, ६ अहन्ता, ७ ममता, ८ क्रिया, प्रक्रिया, ९ गति-प्रगति-विगति-सगति-दुर्गति-विसङ्गति-अवगति-अधोगति इत्यादि, १० वृत्ति-आवृत्ति-प्रवृत्ति-सवृत्ति-निवृत्ति दुर्वृत्ति।

११ मेधा (बुद्धि), १२ धृति (धीरज), १३ शौर्य (साहस) शूर, १४ भीति, १५ भ्रान्ति, १६ भूति-अनुभूति-सहानुभूति-विभूति, १७ प्रमाद, उन्माद, १८ विषाद, १९ काम-सकाम-अकाम-निष्काम-पूर्ण-काम ('काम' के अन्तर्गत रति, आरति, विरति, सुरति आदि)।

२० क्रोध, २१ लोभ, २२ मोह, २३ ईर्ष्या, २४ भावना—सम्भावना, विभावना, २५ द्वेष-विद्वेष, २६ राग-अनुराग-विराग, २७ दया, २८ औदार्य, २९ श्रद्धा (विश्वास), ३० कर्षण-आकर्षण-सङ्कर्षण, ३१ चञ्चलता-अस्थिरता, ३२ स्थैर्य, ३३ दक्षता (चातुर्य), ३४ लक्ष्य, ३५ क्षोभ, ३६ उच्चाट, ३७ जड़ता, ३८ मूढ़ता, ३९ शून्यता, ४० विह्वलता, ४१ उग्रता, ४२ व्यग्रता, ४३ शोक, ४४ विद्या, ४५ तन्द्रा, ४६ जागृति, ४७ मुहूर्त।

(शेष पृष्ठ ३२० पर)

जिज्ञासु के पत्र

(१) हिमाचल प्रदेश के 'कराडा मन्दिर' (हमीरपुर) से ब्र० बी० डी० बाबा लिखते हैं—

“...‘कौल-कल्पतरु चण्डी’ अगस्त, १९८३ की पढ़ो। उसमें लिखा है कि ‘स्वयं पढ़कर कोई साधना करना उचित नहीं।’ बताइए, आजकल उचित अनुभवी गुरु भी तो नहीं मिलते। क्या आप मेरा मार्ग-दर्शन करेंगे? क्या आप भी तान्त्रिक दीक्षा देते हैं? यदि हाँ, तो कब, कैसे आना पड़ता है—सब बातें विस्तार-पूर्वक लिखने की कृपा करेंगे।...”

उत्तर—उचित अनुभवी गुरुओं का अभाव नहीं है। श्रद्धालु अधिकारी जिज्ञासुओं को अनुभवी सद्गुरु अवश्य मिल जाते हैं। हाँ, उसके लिए सच्चाई के साथ प्रयत्न करना पड़ता है। ‘...‘चण्डी’ पत्रिका के इस स्तम्भ के द्वारा जिज्ञासुओं को मार्ग दिखाने का कार्य किया ही जा रहा है। जहाँ तक ‘दीक्षा’ का प्रश्न है, किसी भी ‘गुरु’ को ‘शिष्य’ का पूर्ण परिचय मिलना आवश्यक है। अपना पूरा नाम, माता-पिता, परिवार, कुल-परम्परा का परिचय लिखने के साथ ही अब तक की अपनी उपासना या साधना का विवरण भी लिखना चाहिए। यह विवरण ज्ञात होने पर ‘चण्डी-कार्यालय’ द्वारा ‘दीक्षा’ प्राप्त करने के सम्बन्ध में उचित परामर्श सहज ही दिया जा सकता है। ऐसे जिज्ञासुओं को उत्तर हेतु अपना पता लिखा अन्तर्देशीय या लिफाफा अवश्य भेजना चाहिए।

(२) हिमाचल प्रदेश से पं० सूरजप्रकाश जी सारस्वत (गाँव बड़ोरी, डा० रैल, जि० हमीरपुर १७७०४५) लिखते हैं—

‘चण्डी’ में ‘साधन-माला’ नामक दुर्लभ एवं संग्रहणीय तान्त्रिक साहित्य छापकर सराहनीय प्रयास किया है, जिसके लिए आप विशेष धन्यवाद के पात्र हैं। मेरे कुछ प्रश्न हैं, आशा है, आप कार्य-वाही करने की कृपा करेंगे—

१. वर्ष ५१, अङ्क ७ में ‘पद्मावती अष्टक’ (पृष्ठ २१२) में ‘गोर्वाण यन्त्र’ या ‘मत्स्य यन्त्र’ की पूजा करने का निर्देश है। कृपया इन यन्त्रों की ‘आकृति’ के बारे में लिखें।

२. ‘शिवा बलि’ के सम्बन्ध में पूर्ण-जानकारी देने का कष्ट करें। तान्त्रिक मन्त्र व वैदिक मन्त्र व सामग्री का भी निर्देश करें। सम्भव हो, तो विभिन्न देवी-देवताओं को दी जानेवाली बलियों के सम्बन्ध में एक स्वतन्त्र-लेख प्रकाशित करें, जिसमें बलि-दान की पूर्ण विधि, मन्त्र व सामग्री का समुचित उल्लेख हो। कुछ तान्त्रिक अपने शत्रुओं को ही बलि-रूप में समर्पित कर देते हैं—कृपया इस सम्बन्ध में भी जानकारी देने की कृपा करें।

उत्तर—‘पद्मावती अष्टक’ जैन-मन्त्र-साधना है। यह ‘चण्डी’ वर्ष २२ में प्रकाशित हुआ था। यदि कोई बन्धु ‘गोर्वाण यन्त्र’ या ‘मत्स्य यन्त्र’ पर प्रकाश डाल सकें, तो उसे हम धन्यवाद प्रकाशित करेंगे। ‘शिवा बलि’ के सम्बन्ध में ‘श्रीकाली-कल्पतरु’ पृष्ठ २४३ में विधान दिया गया है। बलि-मन्त्रों के सम्बन्ध में स्वतन्त्र लेख की माँग उचित है, आशा है विद्वान् लेखक-बन्धु इस ओर ध्यान देंगे।

(३) डा० शुभवन्तकिशोर श्रीवास्तव, ‘नर्मदा हाउस’, राजेन्द्र टाकीज के पीछे, शहडोल, म. प्र.

‘चण्डी’, वर्ष ५२, अङ्क ७, आश्विन अक्टूबर, ८३—‘शारदीय नवरात्र अङ्क’ में ‘जिज्ञासु के पत्र’ में मेरी जिज्ञासा ‘विजया - सेवन’ के विषय में समुचित उत्तर पाकर सन्तोष हुआ। इसके लिए आपको पादर धन्यवाद! आप एक आदर्श सम्पादक तथा लेखक हैं, जो दूसरों की बात पर समुचित विचार करते हैं। आप समन्वय-वादी विज्ञ पुरुष हैं—निष्पक्ष सम्पादक हैं। आपको पुनः धन्यवाद!

आपने लिखा है कि 'विष' भी आयुर्वेदिक प्रक्रिया द्वारा रासायनिक पद्धति से संशोधन करके अमृत्यु गुणकारी प्रभाववाली औषधि बन जाता है, किन्तु साधारण लोग यह नहीं समझते और मादक पदार्थ को वैसे ही, उसका तात्कालिक प्रभाव अपने अनुकूल पाकर लेने लगते हैं। इसलिए अपने विद्वानों ने मादक वस्तु लेने का निषेध किया है।

सर्व साधारण के हित में यही उपदेश करना ठीक है कि 'मादक वस्तु का प्रयोग नहीं करना चाहिए, क्योंकि उसकी शोधन क्रिया सबको नहीं मालूम और सभी लोग उसे कर भी नहीं सकते।

'मन्त्र' द्वारा शोधन करना तो और भी कठिन है क्योंकि—सिद्ध हो जाने पर ही मन्त्र यथा-विधि शोधन कर सकता है अन्यथा यह भ्रम ही है।

पुनः समाधान : निषेध का प्रभाव क्या होता है, इसके प्रति डा० श्रीवास्तव का ध्यान नहीं है, यह आश्चर्य-जनक है। आज देश में ही नहीं, सारे विश्व में मद्य-निषेध, धूम्र पान-निषेध आदि मादक द्रव्यों का कितना निषेध किया जा रहा है, किन्तु फल उलटा हो दिखाई दे रहा है! तीव्र-स-तीव्र मादक द्रव्यों के चगुल में सर्व-साधारण लोग—युवक-युवतियाँ तक फँसते जा रहे हैं। शासन-तन्त्र और चिकित्सा-तन्त्र—किसी का कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ रहा है! क्यों? क्योंकि 'निषेध' से किसी वस्तु का आकर्षण कम नहीं होता, अपितु बढ़ जाता है।

वास्तव में, 'निषेध' के स्थान पर मादक द्रव्यों के सेवन की विधि का प्रचार होना चाहिए। कौन नहीं जानता कि शाक्त-साधना की दीक्षा-प्राप्त लोगों का मादक द्रव्य-सेवन कितना सीमित और लाभदायक होता है। इसके विपरीत जो लोग दीक्षा नहीं प्राप्त करते, उनकी प्रवृत्ति मादक द्रव्यों के असीमित सेवन के प्रति निरन्तर बढ़ती ही जाती है।

डा० श्रीवास्तव की यह धारणा भी ठीक नहीं है कि मन्त्र द्वारा शोधन करना कठिन है। वह तो बहुत सरल है। कोई भी कर सकता है। मन्त्र-सिद्धि के सम्बन्ध में भी लोगों में बड़ा भ्रम है। केवल श्रद्धा और विश्वास के साथ कुछ ही समय के अभ्यास द्वारा मन्त्र सिद्ध हो जाते हैं।

आजकल मद्य ही नहीं, उससे भी अधिक उग्र मादक द्रव्यों के सेवन द्वारा आधुनिक शिक्षित लोगों एवं सर्व-साधारण लोगों का जीवन चौपट हो रहा है। उन मादक द्रव्यों की तुलना में विजया-सेवन तो कुछ भी नहीं है और जो पिस्ता, बादाम, मुनक्का, सौंफ, दूध आदि के साथ विधिवत् उसे लेते हैं, उनके लिए तो वह एक लाभ-प्रद औषधि के ही समान है। आशा है कि डा० श्रीवास्तव जैसे अनुभवी चिकित्सक निषेधात्मक निर्देशों के स्थान पर विधि-परक निर्देशों की उपयोगिता पर विचार करेंगे।

(४) सञ्जय कालोनी, भीलवाड़ा (राजस्थान) के श्री शान्तीलाल शारदा लिखते हैं—

(१) 'मन्त्र-कोष' के पृष्ठ १०३ पर 'चण्डी-माला-मन्त्र' प्रकाशित है। लगभग २ वर्षों से मैं उसका नित्य-पाठ कर रहा हूँ। 'हिन्दी मन्त्र-महार्णव' (पृष्ठ ६१) में इसके 'पुरश्चरण' हेतु १२१ पाठ नित्य निर्दिष्ट हैं, किन्तु यह नहीं बताया है कि नित्य कम-से-कम इतने पाठ किए जाएँ। 'पुरश्चरण' तो बाद की बात है। एक निश्चित संख्या में पाठ करने के बाद ही 'पुरश्चरण' की अवधि 'श्लोक' या 'स्ताव' में आती है। जब तक निश्चित मात्रा में पाठ न हो जाय, 'पुरश्चरण' का प्रश्न ही नहीं उठता। अतः कृपया बताएँ कि—(क) 'माला-मन्त्र' के कितने पाठ नित्य होने चाहिए? (ख) उक्त 'माला-मन्त्र' के पाठ से क्या लाभ हैं व किस-किस कार्य हेतु पाठ करने चाहिए?

(२) 'चण्डी-हृदय' के सम्बन्ध में यह उल्लेखनीय है कि 'चण्डी', वर्ष ५१ अङ्क ४ के पृष्ठ १२४ पर पं० नर्मदाप्रसाद पुरोहित द्वारा उक्त स्तोत्र प्रकाशित हुआ। यही स्तोत्र 'श्रीदुर्गा-स्तव-मञ्जरी' के पृष्ठ १६८ में प्रकाशित है, जो पहले की अपेक्षा अधिक बड़ा है। तो किस स्तोत्र को शुद्ध पाठ के रूप में माना जाय ? इसी प्रकार 'श्रीदुर्गा-सप्तशती' के सम्बन्ध में जिज्ञासा है। एक 'सम्पूर्ण दुर्गा सप्तशती' श्री तत्त्वबोधाश्रम जी महाराज ने प्रकाशित करवाई थी, जिसमें पूरे ७०० श्लोक दिए हैं। पाठ में बहुत स्थलों पर भिन्नता भी है, प्रकाशक द्वारा मनमाने ढङ्ग से संशोधन भी किए गए हैं। प्रश्न यह उठता है कि आपके समक्ष जब किसी स्तोत्र का शुद्ध पाठ हो, तो फिर एक ही स्तोत्र को अलग-अलग प्रकार से क्यों प्रस्तुत किया जाता है ?

उत्तर : चण्डी-माला मन्त्र, चण्डी-हृदय आदि जो भी दुर्लभ साहित्य प्रकाशित किया जा रहा है, उसका उद्देश्य यह है कि लुप्त-प्राय साधना-साहित्य नष्ट न होने पाए। 'माला-मन्त्र' के जप का फल उसके 'विनियोग' से स्पष्ट है—'श्रीचण्डिका-प्रसाद' और 'सर्व-जन-वश्याय'। गुरुदेव की अनुमति से इनके स्थान पर अपनी अभीष्ट कामना का उल्लेख कर सकते हैं।

१२१ पाठ नित्य का निर्देश है। इसमें कमी गुरु-देव कर सकते हैं—शिष्य की सामर्थ्य के अनुसार। जहाँ तक एक ही 'स्तोत्र' को अलग-अलग रूप से प्रकाशित करने की बात है, उसका अपना महत्त्व है। प्रत्येक ऐसे रूप का 'प्रयोग' कर किसी-न-किसी साधक ने अभीष्ट-सिद्धि प्राप्त की है। अतः उन सबको सुरक्षित रखना आवश्यक है। इसके अतिरिक्त विभिन्न रूपों के आधार पर शुद्धाशुद्ध के सम्बन्ध में शोध करना भी सरल हो जाता है।

(पृष्ठ ३१७ का शेष)

४८ अभिलाषा, ४९ उक्ति (वाक्य), ५० युक्ति-प्रयुक्ति-अयुक्ति, ५१ योजन-आयोजन-प्रयोजन-संयोजन-नियोजन, ५२ कल्पना-सङ्कल्पना-विकल्प-अकल्पादि, ५३ चिन्ता, ५४ स्मृति, ५५ शान्ति, ५६ तुष्टि, ५७ तृष्णा, ५८ तृप्ति, ५९ लालच, ६० वैर - वैनस्यता, ६१ शठता, ६२ एकाग्रता, ६३ उपेक्षा ६४ घृणा-तिरस्कार, ६५ मद, ६६ मत्सर, ६७ गर्व, ६८ लज्जा, ६९ सङ्कोच, ७० आद्वैता, ७१ संशय, ७२ भ्रम, ७३ श्लाघा, ७४ लघुता, ७५ विषमता।

७६ विद्वेषण, ७७ व्याधि, ७८ गति-सङ्गति-अनुमति-प्रगति-दुर्गति-सुमति-कुमति-शुभमति, ७९ वेग - आवेग - प्रवेग - उद्वेग, ८० रोध-विरोध-अनुरोध-अवरोध-प्रतिरोध-गतिरोध, ८१ आसक्ति, ८२ क्षमा, ८३ तोष-सन्तोष-असन्तोष, ८४ विशालता, गुरुता - महानता, ८५ स्वस्थता, ८६ प्रेरणा, ८७ सत्ता, ८८ हाम, ८९ जुसो-दमाम, ९० होश, ९१ समत्व, ९२ समाहित, ९३ सरलता, ९४ हर्ष-आनन्द, ९५ व्यथा, ९६ नर्वशता, ९७ नम्रता, ९८ लम्बन - अवलम्बन - स्वावलम्बन - परावलम्बन, ९९ जिजीविषा (जीवित रहने की इच्छा), १०० आक्रोश, १०१ माया-ममता, १०२ महत्ता, १०३ पक्ष-पात, १०४ थकान, १०५ विश्राम, १०६ सुस्ती, १०७ भेदाभेद, १०८ गुह्यता-गुप्तता।

'स्फुरणा' मन से परे है। 'मन' स्फुरणा के अधीन है। क्षुधा, तृष्णा, निद्रा, स्त्री - सङ्ग आदि देह की बाह्य वृत्तियाँ हैं। जैसे वायु और जल में तरङ्गें उठती हैं, वैसे ही मन - रूपी सरोवर में वृत्ति-रूपी तरङ्गें उत्पन्न होती हैं। मन सदा जागृत और क्रिया-शील रहता है। जागृत, स्वप्न और सुषुप्ति तीनों अवस्थाओं में 'मन' का व्यापार चलता ही रहता है। 'मन' स्थिर होता है—ध्यान, समाधि, ज्ञान से। वृत्तियाँ रुकीं और समाधि लग गई। 'वृत्ति' का नाश नहीं होता, केवल उनका विराम होता है।



* षट्-चक्रों का वर्णन, * कुण्डलिनी - शक्ति का वर्णन, * कुण्डलिनी-पथ, * कुण्डलिनी-साधना, * कुण्डलिनी के सम्बन्ध में कुछ अनुभूतियाँ, * कुण्डलिनी-योग का विवेचन, * कुण्डलिनी-योग की व्यापकता-यथार्थता, * कुण्डलिनी-उत्थापन की मानसिक क्रिया, * कुण्डलिनी-रहस्य, * कुण्डलिनी की मन्त्रात्मक साधना, * कुण्डलिनी-स्तोत्र-कवच * श्रीमहा-कुण्डलिनी सहस्र-नाम स्तोत्र आदि महत्वपूर्ण विषयों का विवेचन । मूल्य १५-०० रु० मात्र ।

रजि० संख्या
32981/57

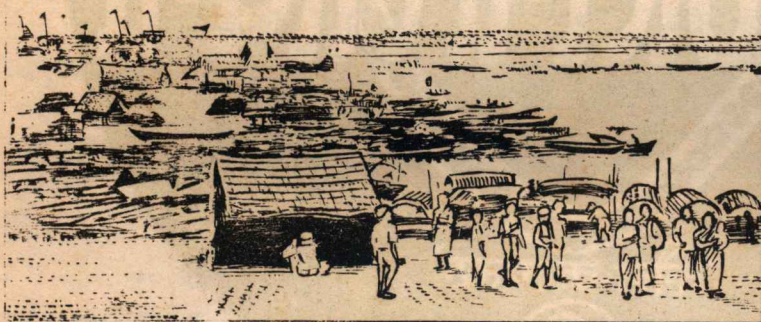
पौष २०५० वि०- जनवरी, १९६४

रजि० संख्या
AD-96

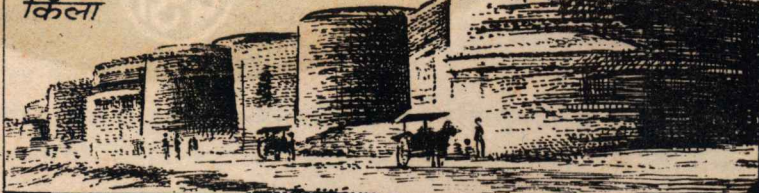


प्रयाग

त्रिवेणी संगम



किला



सम्पादक, प्रकाशक, मुद्रक : आनशील शर्मा

घण्टी - कार्यालय, पटव्याणी प्रेस, प्रयाग २११००६